अध्याय - 5

बाजार की शक्तियाँ

माँग का अर्थ (Meaning of Demand)

अर्थशास्त्र में माँग शब्द का प्रयोग विशेष अर्थ में किया जाता है। बोल-चाल की भाषा में इच्छा, आवश्यकता तथा माँग शब्दों का प्रयोग एक ही अर्थ में किया जाता है। परंतु अर्थशास्त्र में इन तीनों शब्दों के भिन्न-भिन्न अर्थ होते हैं। मान लीजिए, आपको कम्प्यूटर खरीदने की इच्छा है परंतु आपके पास पर्याप्त साधन नहीं है तो यह इच्छा आर्थिक दृष्टि से केवल इच्छा **(Desire)** ही है माँग **(Demand)** नहीं और यदि पर्याप्त साधन होते हुए भी आप उस साधन को कम्प्यूटर खरीदने पर खर्च करना नहीं चाहते तो यह इच्छा केवल आवश्यकता **(want)** ही कहलाएगी, माँग **(demand)** नहीं। यह इच्छा उसी स्थिति में माँग **(Demand)** कहलाएगी जब आप अपने साधन को कम्प्यूटर पर खर्च करने के लिए तैयार हैं। इस बात का स्पष्टीकरण आवश्यक है कि एक निश्चित कीमत व निश्चित समय के सम्बन्ध में ही माँग का उल्लेख किया जाना चाहिए।

वास्तव में माँग का जन्म इच्छा से होता है, पुनः इच्छा आवश्यकता में बदलती है तथा अंत में वही आवश्यकता माँग का रूप ले लेती है। यह ठीक है कि माँग के लिए इच्छा का होना आवश्यक है लेकिन इच्छा मात्र को ही माँग नहीं कहा जा सकता। **Penson** ने प्रभावपूर्ण इच्छा **(Effective desire)** को ही माँग की श्रेणी में रखा है। प्रभावपूर्ण इच्छा के लिए दो बातों का होना जरूरी है - इच्छा की पूर्ति के लिए साधन अथवा क्रय शक्ति **(Means to Purchase)** का होना तथा उसे खरीदने की तत्परता **(Willingness to Purchase)**। लेकिन इच्छा प्रभावपूर्ण होने से ही माँग नहीं कहला सकती। वास्तव में प्रभावपूर्ण इच्छा तो आवश्यकता में बदल जाती है। इस प्रभावपूर्ण इच्छा या आवश्यकता को माँग में परिणत होने के लिए मूल्य **(Price)** एवं समय का होना भी आवश्यक है। माँग सदैव एक दिए हुए मूल्य पर होती है, इसलिए जब तक मूल्य व्यक्त नहीं किया जाए, तब तक माँग शब्द की कोई सार्थकता नहीं है।

इसके आधार पर हम कह सकते हैं कि माँग के लिए निम्नलिखित पांच तत्वों का होना आवश्यक है :

1. किसी वस्तु की इच्छा **(Desire for a Commodity)**
2. उस इच्छा की पूर्ति के लिए साधन या क्रय शक्ति **(Means or ability to Purchase)**
3. साधन को व्यय करने की तत्परता **(Willingness to Purchase)**
4. मूल्य का होना **(A given price)**
5. एक निश्चित अवधि **(A given time)** का होना।

वस्तुओं की माँग क्यों की जाती है ?

हम वस्तुओं और सेवाओं की माँग इसलिए करते हैं क्योंकि उनमें हमारी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की क्षमता होती है। मानवीय आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की यह क्षमता उपयोगिता कहलाती है। अतः हम कह सकते हैं कि वस्तुओं की माँग इसलिए की जाती है क्योंकि उनमें उपयोगिता है।

अर्थशास्त्री किसी वस्तु की माँगी गई मात्रा (**Quantity Demanded**) तथा माँग (**Demand**) सम्बन्धी धारणाओं में अंतर करते हैं।

परिभाषा (Definition)

अन्य बातें समान रहने पर, किसी वस्तु की एक निश्चित कीमत पर एक उपभोक्ता उसकी जितनी मात्रा खरीदने को इच्छुक है तथा योग्य होता है उसे माँगी गई मात्रा (**Quantity Demanded**) कहा जाता है।

उदाहरण के लिए, मान लीजिए जब एक चॉकलेट की कीमत 1 रुपये है तो उपभोक्ता 5 चॉकलेट खरीदता है। अर्थात एक रुपये प्रति चॉकलेट की कीमत पर 5 चॉकलेट की मात्रा माँगी गई है।

इसके विपरीत, "माँग किसी वस्तु की वे मात्राएँ हैं जो अन्य तत्वों के समान रहने पर एक उपभोक्ता समय की एक निश्चित अवधि में विभिन्न कीमतों पर खरीदने के लिए इच्छुक तथा योग्य है।"

उदाहरण के लिए, मान लीजिए उपभोक्ता 1 रुपये कीमत पर 5 आईसक्रीम की माँग करता है, 2 रुपये कीमत पर 4 आईसक्रीम तथा 3 रुपये कीमत पर 2 आईसक्रीम की माँग करता है।

माँग का नियम (Law of Demand)

माँग का नियम यह बतलाता है कि यदि अन्य बातें समान रहें (**Other things remaining the same**) तो मूल्य में कमी होने से माँग की मात्रा बढ़ती है तथा मूल्य में वृद्धि होने से माँग की मात्रा कम होती है।

अन्य बातें समान रहने से अभिप्राय है कि उपभोक्ता की आय, सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत, उपभोक्ता की रुचि आदि स्थिर रहती है।

प्रो0 मार्शल (**Marshall**) ने इस नियम को इस प्रकार व्यक्त किया है - मूल्य में कमी होने से माँग की मात्रा बढ़ती है तथा मूल्य में वृद्धि होने से माँग की मात्रा कम होती है। (**The amount demanded increares with a fall in price and diminisheds with a rise in price**).

अतः माँग किसी वस्तु की वे मात्राएं हैं जिन्हें एक उपभोक्ता अन्य बातें समान रहने पर प्रत्येक संभव कीमत पर एक निश्चित समय में खरीदने के लिए इच्छुक तथा योग्य है।

माँग का नियम मूल्य एवं माँग के बीच के संबंध को व्यक्त करता है। वास्तव में मूल्य एवं माँग में विपरीत संबंध (**Inverse Relationship**) होता है, अर्थात मूल्य घटने से माँग बढ़ती है तथा मूल्य के बढ़ने से माँग घटती है।

उदाहरण द्वारा व्याख्या

मान लिया जाए कि बाजार में जब आलू की कीमत 20 रुपये प्रति किलो है तो कोई व्यक्ति 5 किलो आलू की माँग करता है। जब कीमत घटकर 16 रुपये प्रति किलो हो जाती है तो माँग की बढ़कर 10 किलो हो जाती है

इसी प्रकार जैसे-जैसे आलू की कीमत घटती जाती है, उसकी माँग बढ़ती जाती है, इसे आगे की तालिका में दिखाया गया है -

1. मूल्य में कमी होने पर माँग बढ़ती है।

आलू की कीमत	माँगी गई मात्रा
20 रुपये	5 किलो
16 रुपये	10 किलो
12 रुपये	15 किलो
8 रुपये	20 किलो

निम्नलिखित तालिका में यह दिखाया गया है कि आलू की कीमत में जैसे-जैसे वृद्धि की जाती है, उसकी माँग घटती है।

2. मूल्य में वृद्धि होने पर माँग घटती है

आलू की कीमत	माँगी गई मात्रा
8 रुपये	20 किलो
12 रुपये	15 किलो
16 रुपये	10 किलो
20 रुपये	5 किलो

माँग के नियम का चित्र द्वारा स्पष्टीकरण :

माँग के नियम को हम **चित्र संख्या-5.1** के द्वारा भी स्पष्ट कर सकते है -

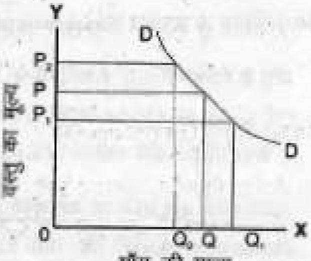

रेखा चित्र : 5.1

इस चित्र में **OX** रेखा पर माँग की मात्रा तथा **OY** रेखा पर वस्तु का मूल्य दिखलाया गया है। **DD** माँग की रेखा है। चित्र से यह स्पष्ट होता है कि वस्तु का मूल्य जब **OP** है तो माँग की मात्रा **OQ** है लेकिन मूल्य घटकर जब **OP** से **OP_1** हो जाता है तो माँग की मात्रा **OQ** से बढ़कर **OQ_1** हो जाती है। इसके विपरीत जब मूल्य **OP** से बढ़कर **OP_2** हो जाता है तो माँग की मात्रा **OQ** से घटकर **OQ_2** हो जाती है। वास्तव में माँग वक्र का ऊपर से नीचे की ओर ढलान माँग के नियम को प्रकट करता है।

माँग के नियम की तुलना बच्चों के झूले **(Sea-Saw)** से की जाती है। जब पटरे पर एक बच्चा नीचे की ओर आता है तो दूसरा बच्चा ऊपर की ओर चला जाता है। उसी प्रकार जब मूल्य ऊपर उठता है तो माँग नीचे आ जाती है तथा जब मूल्य नीचे गिरता है, तब माँग ऊपर की ओर उठती है। इसे **रेखा चित्र-5.2** द्वारा दिखाया गया है -

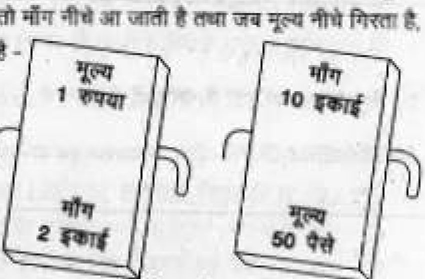

रेखा चित्र : 5.2

माँग के नियम की मान्यताएँ (Assumptions of the law of demand)

माँग का नियम तभी लागू होता है "जब अन्य बातें समान हो।" **(Other things being equal)** इससे अभिप्राय यह है कि माँग को प्रभावित करने वाले कीमत के अतिरिक्त अन्य तत्वों को स्थिर मान लिया जाता है। इन्हें इस नियम की मान्यताएं कहा जा सकता है। इस नियम की निम्नांकित मान्यताएं हैं-

1. उपभोक्ता की आय में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
2. उपभोक्ता की आदत, रुचि एवं फैशन में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
3. स्थानापन्न (संबंधित) वस्तुओं की कीमत में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
4. जनसंख्या में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
5. धन के वितरण में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
6. मौसम में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
7. वस्तु की कीमत के भविष्य में और अधिक परिवर्तन की संभावना नहीं होनी चाहिए।
8. उपभोक्ता की कुल संपत्ति में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

माँग के नियम के अपवाद (Exceptions to the law of Demand)

माँग के नियम के कुछ अपवाद भी है। इसका अर्थ यह हुआ कि कुछ वस्तुओं की कीमत अधिक होने पर उनकी माँग बढ़ जाती है तथा कीमत कम होने पर,उनकी माँग कम हो जाती है। ऐसी अवस्था में माँग की रेखा नीचे की ओर दाहिने तरफ न झुककर नीचे से ऊपर दाहिनी ओर चली जाती है। इसका धनात्मक ढलान **(Positive Slope)** हो जाता है।

सबसे पहले इस तथ्य पर सर राबर्ट गिफेन **(Sir Robert Giffen)** ने विश्लेषण किया था। इसलिए इसे गिफेन का विरोधाभास **(Giffen's paradox)** भी कहा जाता है। माँग के नियम के मुख्य अपवाद निम्नलिखित हैं -

1. अनिवार्य वस्तुओं के संबंध में (In case of Necessary goods)

ये वस्तुएं जैसे नमक, चावल, गेहूँ आदि वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि होने पर भी उनकी माँग लगभग पूर्ववत ही रहती है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि इन वस्तुओं का उपभोग अनिवार्य है।

2. भविष्य में मूल्य परिवर्तन की आशंका (Expectation of price change in future)

यदि भविष्य में मूल्य बढ़ने की आशंका हो तो वस्तु के मूल्य में वृद्धि होने पर भी उनकी माँग में वृद्धि हो जाएगी। लोग वर्तमान मूल्य पर ही अधिक इकाइयों का भंडारण कर लेंगे। इसके विपरीत यदि भविष्य में वस्तु के मूल्य में और अधिक गिरावट की संभावना हो तो लोग वस्तु के मूल्य में कमी होने पर भी उसकी माँग कम कर देंगे क्योंकि वे सोचेंगे कि भविष्य में यह वस्तु और सस्ती होगी।

3. बहुमूल्य एवं प्रतिष्ठा की वस्तुओं के संबंध में (In case of Priceless goods and goods of distinction)

बहुमूल्य वस्तुओं जैसे- हीरा, जवाहरात एवं प्रतिष्ठा प्रदान करने वाली वस्तुओं के संबंध में यह नियम लागू नहीं होती। वस्तुओं के मूल्य बढ़ने पर भी इनकी माँगें कम नहीं होती। इसका कारण यह है कि ये वस्तुएं धनी वर्ग द्वारा प्रायः अपनी शानशौकत दिखाने या सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए उपयोग की जाती है। वास्तव में इन वस्तुओं की सार्थकता तभी तक है जब तक इनका मूल्य ऊँचा रहता है। यदि इन वस्तुओं का मूल्य गिर जाए तो इनकी माँग में वृद्धि नहीं होगी क्योंकि इनका सामाजिक मूल्य कम हो जाएगा।

4. शादी-ब्याह या अन्य त्योहारों के अवसर पर (On Occasion like marriage and other festivals)

शादी-ब्याह या अन्य त्योहारों के अवसर पर माँग का नियम लागू नहीं होता इसका कारण यह है कि इन अवसरों पर कुछ विशेष वस्तुओं जैसे- कपड़ा, आभूषण, मिठाई आदि का खरीदना आवश्यक होता है। अतः इनके मूल्य में वृद्धि होने पर भी इन अवसरों पर इनकी माँग कम नहीं होती।

5. आदत की वस्तुओं के संबंध में (In case of habitual goods)

लोगों को जिन वस्तुओं की आदत पड़ जाती है उन्हें वे अधिक मूल्य पर भी खरीदते हैं। इन पर भी माँग का नियम लागू नहीं होता।

6. पूरक वस्तुओं के संबंध में (In case of complementary goods)

माँग का नियम पूरक वस्तुओं के संबंध में लागू नहीं होता। जैसे- कार एवं पेट्रोल। पेट्रोल के मूल्य में वृद्धि होने पर जिनके पास कार है वो पेट्रोल की माँग करेंगे। अतः पेट्रोल की माँग प्रभावित नहीं होगी।

7. परम्परागत आवश्यकताओं के संबंध में

परम्परागत या सामाजिक आवश्यकताओं के संबंध में भी यह नियम ठीक से लागू नहीं होता है। शादी-ब्याह में पार्टी देना, अच्छे वस्त्रों का व्यवहार करना आदि बातें परम्पराओं में सम्मिलित हैं। इसलिए मूल्य में वृद्धि होने पर भी इन आवश्यकताओं से संबंधित माँग की पूर्ति करनी ही पड़ती है।

8. आय में वृद्धि होने पर (In case of increase in demand)

यदि व्यक्ति की आय बढ़ जाए, तो बढ़ते हुए मूल्य पर भी सामान्यतः किसी वस्तु की माँग घटेगी नहीं। इसका कारण यह है कि आय में वृद्धि हो जाने के कारण व्यक्ति की उपभोग क्षमता में भी वृद्धि हो गई।

पर इन अपवादों तथा सीमाओं के बावजूद भी सामान्यतः माँग के नियम का व्यावहारिक महत्व है तथा यह नियम हमारे दैनिक जीवन में लागू होता है, इस कारण अर्थशास्त्र में उपभोग के क्षेत्र में इस नियम के अध्ययन का महत्व तथा उपयोगिता है।

माँग की लोच (Elasticity of Demand)

माँग की लोच का अर्थ - माँग के नियम के अंतर्गत हमने किसी वस्तु के मूल्य और उसकी माँग के पारस्परिक संबंध का अध्ययन किया। नियम के अनुसार, किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि होने पर उसकी माँग घटती है तथा मूल्य में ह्रास होने पर माँग बढ़ती है। पर मूल्य और माँग का संबंध सदैव आनुपातिक नहीं होता। दूसरे शब्दों में, किसी वस्तु के मूल्य में जितना प्रतिशत परिवर्तन होता है, उस वस्तु की माँग में भी उतना प्रतिशत ही परिवर्तन नहीं होता।

कभी-कभी किसी वस्तु के मूल्य में थोड़ा सा परिवर्तन भी उसकी माँग को बहुत अधिक प्रभावित करता है। दूसरी ओर, कुछ अवस्थाओं में किसी वस्तु के मूल्य में बहुत अधिक परिवर्तन होने पर भी उस वस्तु की माँग में थोड़ा परिवर्तन या शून्य परिवर्तन होता है। **उदाहरण के लिए**, यदि लैप टॉप का मूल्य गिर जाए तो उसकी माँग काफी बढ़ जाएगी। लेकिन नमक के मूल्य में वृद्धि या कमी का उसके माँग में कोई विशेष अंतर नहीं होगा।

इसलिए: मूल्य में होनेवाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप माँग में होनेवाले परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए हम माँग की लोच का सहारा लेते हैं। माँग की लोच के अंतर्गत इस बात का अध्ययन होता है कि किसी वस्तु के मूल्य में होनेवाले परिवर्तन के

परिणामस्वरूप उसकी माँग में कितना परिवर्तन होता है।

परिभाषा (Definition)

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने माँग की लोच की अलग-अलग परिभाषा दी है। माँग की लोच की कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार है-

1. **केयर्नक्रॉस (Cairncross) :** "किसी वस्तु की माँग की लोच वह गति है जिस पर माँगी गई वस्तु की मात्रा मूल्य के आधार पर बदलती है।"

2. **प्रो0 बोल्डिंग (Prof. Boulding) :** "किसी वस्तु के मूल्य में एक प्रतिशत परिवर्तन के फलस्वरूप उसकी माँग की मात्रा में जो परिवर्तन होता है उसे माँग की लोच कहते हैं।"

3. **प्रो0 मेयर्स (Prof. Meyers) :** "माँग की लोच किसी दी हुई माँग की रेखा पर मूल्य में होनेवाले परिवर्तन के फलस्वरूप माँग की मात्रा में सापेक्षिक परिवर्तन की माप है।"

4. **प्रो0 मार्शल (Prof. Marshall) :** "मूल्य कम होने पर माँग बहुत कम या अधिक बढ़ती है; तथा मूल्य कुछ बढ़ने पर माँग अधिक या कम घटती है, इसके अनुसार ही बाजार में वस्तु की माँग की लोच बहुत अधिक या कम होती है।"

प्रश्न - माँग की लोच से आप क्या समझते हैं ?

माँग की लोच को सूत्र के रूप में निम्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है -

$$\text{माँग की लोच } Ed = (-)\frac{\text{माँग में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$Ed = (-)\frac{\dfrac{\text{माँग में परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक माँग}} \times 100}{\dfrac{\text{कीमत में परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक कीमत}} \times 100} = (-)\frac{\left|\dfrac{Q_1 - Q}{Q}\right|}{\left|\dfrac{P_1 - P}{P}\right|} = \frac{\dfrac{EQ}{Q}}{\dfrac{EP}{P}}$$

$$Ed = (-)\frac{EQ}{Q} + \frac{EP}{P} = (-)\frac{EQ}{Q} \times \frac{P}{EP} \quad \text{या} \quad Ed = (-)\frac{P}{Q_1} \times \frac{EQ}{EP}$$

(यहाँ Q = प्रारंभिक माँग

Q_1 = परिवर्तित माँग

P = प्रारंभिक कीमत

P_1 = परिवर्तित कीमत

EQ = माँग में परिवर्तन

EP = कीमत में परिवर्तन

E डेल्टा (यह चिह्न परिवर्तन को प्रकट करता है।)

माँग की लोच मुख्य रूप से तीन प्रकार की हो सकती है -

(i) माँग की कीमत लोच (Price Elasticity of Demand) : माँग की कीमत लोच कीमत में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन तथा माँग में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन का अनुपात है।

(ii) माँग की आय लोच (Income Elasticity of Demand) : जब माँगी गई मात्रा के परिवर्तन को क्रेता की आय में हुए परिवर्तन के संदर्भ के रूप में मापा जाता है, तो इसे माँग की आय लोच कहा जाता है।

(iii) माँग की आड़ी लोच (Cross Elasticity of Demand) : जब एक वस्तु की माँगी गई मात्रा के परिवर्तन को दूसरी संबंधित वस्तु की कीमत में हुए परिवर्तन के संदर्भ में मापा जाता है तो इसे माँग की आड़ी लोच कहते हैं।

(इस अध्याय में हम केवल माँग की कीमत लोच का अध्ययन करेंगे)

माँग की कीमत लोच (Price Elasticity of Demand)

माँग की कीमत लोच कीमत में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन तथा माँग में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन का अनुपात है **(Price Elasticity of Demand is percentage change in demand divided by percentage change in price.)** माँग की लोच से ज्ञात होता है कि किसी वस्तु की कीमत बढ़ने से माँग में कितने प्रतिशत की कमी होगी तथा कीमत कम होने से माँग में कितने प्रतिशत की वृद्धि होगी।

माँग की कीमत लोच की श्रेणियाँ (Degrees of Price Elasticity of Demand)

जब किसी वस्तु के मूल्य में थोड़ा-सा परिवर्तन होने पर माँग की मात्रा में बहुत अधिक परिवर्तन हो जाता है, तो वस्तु की माँग लोचदार माँग कहलाती है, किसी वस्तु की माँग को तब 'लोचदार' माना जाता है जब माँग की लोच इकाई से अधिक **(Ed>I)** होती है।

दूसरी ओर जब किसी वस्तु के मूल्य में बहुत अधिक परिवर्तन होने पर भी माँग की मात्रा में बहुत कम अथवा लगभग शून्य परिवर्तन होता है, तब वस्तु की माँग बेलोचदार माँग कहलाती है। इस स्थिति में माँग की लोच इकाई से कम **(Ed<I)** होती है।

अर्थशास्त्रियों ने माँग की लोच के विभिन्न प्रकार या भेद बताए हैं। माँग की लोच के निम्नलिखित पांच प्रकार होते हैं-

1. पूर्णतया लोचदार माँग (Perfectly Elastic Demand)

जब मूल्य में अल्प कमी होने पर माँग में अनंत **(Infinite)** वृद्धि हो जाय तथा मूल्य में वृद्धि होने पर माँग घटकर शून्य हो जाए तो माँग पूर्णतः लोचदार होती है। इसे निम्नलिखित **रेखा चित्र 5.3** द्वारा दिखाया गया है। इस चित्र में **OX** रेखा में माँग की मात्रा तथा **OY** रेखा पर मूल्य को दिखाया गया है **DD** पूर्णतया लोचदार माँग की रेखा है तथा मूल्य **OD** है चित्र में स्पष्ट है कि माँग की रेखा **DD** वास्तव में **OX** के समानान्तर **(Parallel)** है जिसका अर्थ यह है कि मूल्य **OP** में थोड़ी-सी भी कमी हो तो माँग बढ़कर अनंत हो जाएगी तथा मूल्य की थोड़ी-सी वृद्धि से भी माँग घट कर शून्य हो जाएगी। लेकिन वास्तविक जीवन में पूर्णतः लोचदार माँग का उदाहरण देखने को नही मिलता।

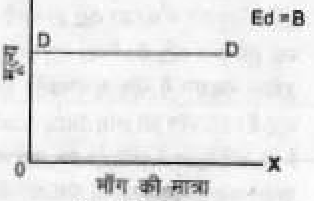

रेखा चित्र : 5.3

2. पूर्णतः बेलोचदार माँग (Perfectly Inelastic Demand)

जब वस्तु के मूल्य में कमी अथवा वृद्धि होने पर माँग पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा, तो ऐसी अवस्था में वस्तु की माँग पूर्णतः बेलोचदार माँग कहलाती है। पूर्णतः बेलोचदार माँग के उदाहरण भी कम देखने को मिलते हैं। **रेखा चित्र 5.4** में **QD** पूर्णतः बेलोचदार माँग की रेखा है चित्र से स्पष्ट है कि जब मूल्य **OP** है तो माँग **OQ** है लेकिन मूल्य घटकर जब **OP_1** हो जाता है तब भी माँग की मात्रा **OQ** ही रहती है। उसी प्रकार मूल्य बढ़कर जब **OP_2** हो जाता है तब भी माँग **OQ** ही रहती है। अर्थात मूल्य के घटने अथवा बढ़ने पर माँग की मात्रा सर्वदा **OQ** ही रहती है। अतः यहां माँग पूर्णतः बेलोचदार है।

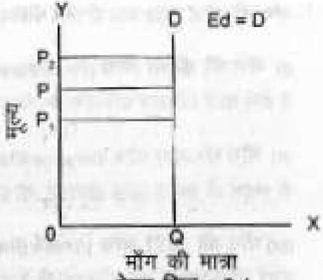

रेखा चित्र : 5.4

3. समलोचदार माँग या माँग की लोच इकाई के बराबर (Unit elastic demand or elasticity of demand equal to unity)

जिस अनुपात में मूल्य मे परिवर्तन हो उसी अनुपात में माँग में भी परिवर्तन हो तो उसे समलोचदार माँग या माँग की लोच इकाई के बराबर कहते हैं। **रेखा चित्र 5.5** में **DD** समलोचदार माँग की रेखा है। चित्र से स्पष्ट है कि जब मूल्य **OP** है तो माँग की मात्रा **OQ** है लेकिन जब मूल्य घटकर **OP_1** हो जाता है तो माँग भी ठीक उसी अनुपात में बढ़कर **OQ_1** हो जाती है। अर्थात जिस अनुपात में मूल्य मे परिवर्तन हुआ है ठीक उसी अनुपात में माँग में भी परिवर्तन हुआ। अतः यहाँ समलोचदार माँग या माँग की लोच इकाई के बराबर कहते है इकाई के बराबर कहने का अर्थ है कि मूल्य में परिवर्तन **PP_1** को एक अथवा इकाई **(Unity)** मान लें तो माँग मे हुआ परिवर्तन **QQ_1** भी एक अथवा **(Unity)** ही माना जायेगा क्योंकि दोनों एक दूसरे के बराबर है। अतः समलोचदार माँग में **Ed=1**

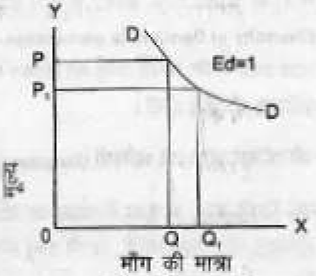

रेखा चित्र : 5.5

4. सापेक्षिक लोचदार माँग या माँग की लोच इकाई से अधिक

जिस अनुपात में मूल्य में परिवर्तन हो रहा हो उससे अधिक अनुपात में माँग में परिवर्तन हो तो इसे सापेक्षिक लोचदार माँग या माँग की लोच इकाई से अधिक कहते हैं। इसे **रेखा चित्र 5.6** से दिखाया गया है। इस चित्र में **DD** सापेक्षिक लोचदार माँग की रेखा है। चित्र से स्पष्ट है कि जब मूल्य **OP** है तो माँग **OQ** है लेकिन जब मूल्य घटकर **OP_1** हो जाता है तो माँग उससे भी अधिक अनुपात में बढ़कर **OQ_1** हो जाती है। यहां घटा हुआ मूल्य **PP_1** है तथा बढ़ी हुई माँग **QQ_1** है। जिस अनुपात में मूल्य मे परिवर्तन हो रहा है उससे अधिक अनुपात में माँग में परिवर्तन हुआ है। अतः यह सापेक्षिक लोचदार माँग है। इसे माँग की लोच इकाई से अधिक भी कहते हैं। इसका कारण यह है कि यदि मूल्य मे परिवर्तन **PP_1** एक मान लें तो माँग में हुआ परिवर्तन **QQ_1** अर्थात एक से अधिक लें तो माँग की लोच इकाई से अधिक **(Ed>1)** होगी।

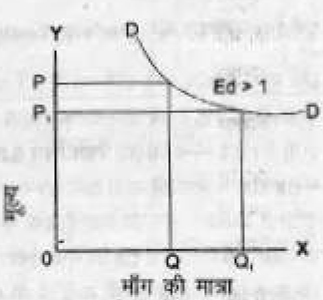

रेखा चित्र : 5.6

$$Ed = (-)\ \frac{\text{माँग में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

5. सापेक्षिक बेलोचदार माँग या माँग की लोच इकाई से कम

जिस अनुपात में मूल्य में परिवर्तन हो रहा हो उससे कम अनुपात में माँग में परिवर्तन हो तो उसे सापेक्षिक बेलोचदार माँग या माँग की लोच इकाई से कम कहते हैं। इसे **रेखा चित्र 5.7** से दिखाया गया है। इस चित्र में **DD** सापेक्षिक बेलोचदार माँग की रेखा है। चित्र से स्पष्ट है कि जब मूल्य **OP** है तो माँग **OQ** है लेकिन जब मूल्य घटकर **OP_1** हो जाता है तो माँग उससे कम अनुपात में बढ़कर **OQ_1** हो जाता है। यहाँ घटा हुआ मूल्य **PP_1** है तथा बढ़ी हुई माँग **QQ_1** है। अर्थात जिस अनुपात में मूल्य में परिवर्तन हुआ है उससे कम अनुपात में माँग में परिवर्तन हुआ है। अतः यहाँ माँग सापेक्षिक बेलोचदार है। सापेक्षिक बेलोचदार माँग को माँग की लोच इकाई से कम भी कहते हैं। इसका कारण यह है कि यदि मूल्य में हुए परिवर्तन **PP_1** को एक अथवा इकाई **(Unity)** मानें तो माँग में हुआ परिवर्तन **QQ_1** एक अथवा इकाई से कम होगा। तो माँग की लोच इकाई से कम अर्थात **$Ed < 1$** होगा।

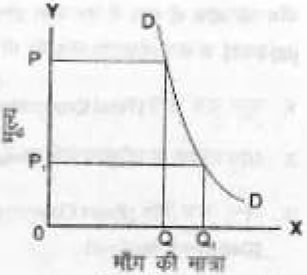

रेखा चित्र : 5.7

प्रश्न - माँग की लोच के प्रकार की व्यावहारिक उपयोगिता क्या है ?

माँग की लोच की धारणा का महत्व

माँग की लोच के सिद्धांत का व्यावहारिक महत्व भी है -

1. मूल्य-निर्धारण में सुविधा

माँग की लोच का सिद्धांत व्यवसायी वर्ग को उत्पादित वस्तुओं के मूल्य निर्धारण में सुविधा प्रदान करता है। यदि वस्तु की माँग बेलोचदार है, तो ऊँचा मूल्य रखकर भी व्यवसायी वस्तुओं की बिक्री अधिक मात्रा में कर सकता है। पर यदि वस्तु की माँग लोचदार हुई तो ऊँचा मूल्य रखना सम्भव नहीं होगा, क्योंकि वैसी अवस्था में माँग कम हो जाएगी।

2. कर-नीति में सुविधा

यह सिद्धांत सरकार को कर-नीति निर्धारित करने में भी सहायता प्रदान करता है। यदि सरकार वैसी वस्तुओं पर कर लगाती है, जिनकी माँग बेलोचदार है, तो इससे सरकार को लाभ होगा, क्योंकि कर लगाने पर भी उनकी माँग में अधिक कमी नहीं होगी। पर जिन वस्तुओं की माँग लोचदार है, उन पर कर लगाना अधिक लाभप्रद नहीं होगा, क्योंकि मूल्य बढ़ने से माँग भी घट जाएगी।

3. एकाधिकार में मूल्य निर्धारण में सुविधा

यह सिद्धांत एकाधिकारी उत्पादक को भी सहायता प्रदान करता है। एकाधिकारी का वस्तु की पूर्ति पर पूर्ण अधिकार रहता है। जब वस्तु की माँग लोचदार होगी तब वह मूल्य थोड़ा कम करके भी वस्तु अधिक मात्रा में बेचकर लाभ कमाएगा। दूसरी ओर, यदि माँग बेलोचदार है, तो एकाधिकारी मूल्य बढ़ाकर भी अधिक लाभ अर्जित कर सकता है।

4. विदेशी व्यापार के क्षेत्र में सुविधा

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में भी इस सिद्धांत का सहारा लिया जा सकता है। यदि किसी देश द्वारा निर्यात की जानेवाली वस्तु की माँग विदेशों में बेलोचदार है तो उस वस्तु का मूल्य विदेशों में बढ़ाया जा सकता है।

माँग की लोच की माप (Measurement of Elasticity of Demand)

माँग की लोच के माप से यह ज्ञात होता है कि किसी वस्तु की माँग (i) इकाई लोचदार माँग (ii) इकाई से अधिक लोचदार माँग (iii) इकाई से कम लोचदार माँग है। माँग की लोच मापने की निम्न विधियाँ हैं -

1. कुल व्यय विधि (Total Expenditure Method)
2. आनुपातिक या प्रतिशत विधि (Proportionate or Percentage Method)
3. बिन्दु लोच विधि (Point Elasticity Method) या ग्राफिक विधि (Graphic Method) या ज्यामितीय विधि (Geometric Method)

माँग की लोच की माप

1. कुल व्यय विधि
2. आनुपातिक या प्रतिशत विधि
3. बिन्दु लोच विधि

1. कुल व्यय विधि (Total Expenditure Method)

माँग की लोच मापने की कुल व्यय विधि का प्रतिपादन डॉ. मार्शल ने किया था। इस विधि के अनुसार माँग की लोच को मापने के लिए यह मालूम करना चाहिए कि किसी वस्तु की कीमत में परिवर्तन होने से उस पर किए जाने वाले कुल व्यय में कितना परिवर्तन किस दिशा में होता है।

(क) माँग की लोच इकाई के बराबर (Unitary Elastic Demand) : जब किसी वस्तु की कीमत के कम या अधिक होने पर उस पर किए जाने वाले कुल व्यय पर कोई प्रभाव नही पड़ता तो माँग की लोच इकाई के बराबर होगी। इसे निम्न तालिक से समझा जा सकता है -

वस्तु की कीमत (Rs.)	मात्रा (Kg.)	कुल व्यय (Rs.)	कुल व्यय पर प्रभाव	माँग की लोच
2	4	8	कुल व्यय समान ↕	
4	2	8	रहता है इसमें	इकाई
1	8	8	परिवर्तन नहीं होता।	Ed = 1

इस तालिका से ज्ञात होता है कि जब वस्तु की कीमत 2 रुपये है तो वस्तु पर कुल खर्च 8 रुपये किया जाता है। यदि कीमत बढ़ कर 4 रुपये हो जाती है तो भी वस्तु पर किया जाने वाला कुल व्यय 8 रुपये ही रहता है। इसके विपरीत यदि वस्तु की कीमत कम होकर 1 रुपया हो जाती है तो कुल व्यय 8 रुपये ही रहता है। अतः कीमत में परिवर्तन का कुल व्यय पर कोई परिवर्तन नहीं होता है।

(ख) माँग की लोच इकाई से अधिक (Greater than Unitary Elastic) : जब किसी वस्तु की कीमत कम होने पर कुल व्यय बढ़ता है तथा कीमत के अधिक होने पर कुल व्यय घटता है तो उस वस्तु की माँग की लोच इकाई से अधिक होती है। इसे निम्न तालिका से दिखाया जा सकता है -

वस्तु की कीमत (Rs.)	मात्रा (Kg.)	कुल व्यय (Rs.)	कुल व्यय पर प्रभाव	माँग की लोच
2	4	8	कीमत कम होने पर कुल व्यय बढ़ता है तथा कीमत बढ़ने पर कम होता है। ↑	इकाई से अधिक Ed > 1
4	1	4		
1	10	10		

इस तालिका से ज्ञात होता है कि जब वस्तु की कीमत 2 रूपये है तो कुल व्यय 8 रूपये है यदि वस्तु की कीमत बढ़कर 4 रूपये हो जाती है तो कुल व्यय 8 रूपये से कम होकर 4 रूपये हो जाता है। इसके विपरीत जब वस्तु की कीमत कम होकर 1 रुपया हो जाती है तो कुल व्यय बढ़कर 10 रुपए हो जाती है। अतः कीमत में परिवर्तन होने के फलस्वरूप कुल व्यय मे परिवर्तन विपरीत दिशा में होता है।

ग) माँग की लोच इकाई से कम (Less than Unitary Elastic) : जब किसी वस्तु की कीमत कम होने से कुल व्यय कम हो जाता है तथा कीमत बढ़ने से कुल व्यय बढ़ जाता है अर्थात कुल व्यय उसी दिशा में परिवर्तित होता है जिसमें कीमत में परिवर्तन होता है। तो उस वस्तु की माँग की लोच इकाई से कम अर्थात बेलोचदार होगी। इसे आगे की तालिका में दिखाया गया है -

वस्तु की कीमत (Rs.)	मात्रा (Kg.)	कुल व्यय (Rs.)	कुल व्यय पर प्रभाव	माँग की लोच
2	3	6	कीमत कम होने पर कुल व्यय कम होता है तथा कीमत बढ़ने पर कुल व्यय बढ़ता है ↓	इकाई से कम Ed < 1
4	2	8		
1	4	4		

इस तालिका से ज्ञात होता है कि जब वस्तु की कीमत 2 रुपये है तो कुल व्यय 6 रुपये है। यदि कीमत बढ़ कर 4 रुपये हो जाती है तो कुल व्यय 6 रुपये से बढ़कर 8 रुपये हो जाता है। इसके विपरीत यदि वस्तु की कीमत कम होकर 1 रुपये होती है तो कुल व्यय कम होकर 4 रुपये हो जाता है। इस प्रकार कीमत में होने वाले परिवर्तन का कुल व्यय पर समान दिशा में प्रभाव पड़ता है।

रेखा चित्र 5.8 - से माँग की लोच मापने की कुल व्यय विधि को स्पष्ट किया जा सकता है। OY अक्ष पर मूल्य तथा OX अक्ष पर कुल व्यय को दिखाया गया है। TE कुल व्यय वक्र है। वक्र TE के बीच का BC भाग इकाई कीमत लोच को प्रकट करता है। इससे ज्ञात होता है कि जब कीमत OM है तो कुल व्यय MC है जब कीमत बढ़कर ON हो जाती है तो कुल व्यय मे कोई परिवर्तन नहीं होता वह NB के बराबर ही रहता है। **MC = NB**

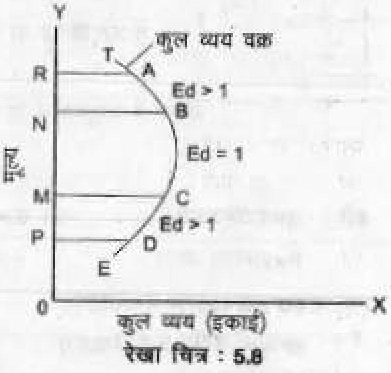

रेखा चित्र : 5.8

वक्र **TE** का **TB** भाग इकाई से अधिक लोच को बताता है। इससे ज्ञात होता है कि जब कीमत **ON** से बढ़कर **OR** हो जाती है तो कुल व्यय **NB** से कम होकर **RA** हो जाता है। वक्र **TE** का **EC** भाग इकाई से कम कीमत लोच को प्रकट कर रहा है। इससे ज्ञात होता है जब कीमत **OM** से कम होकर **OP** हो जाती है तो कुल व्यय भी **MC** से कम होकर **PD** हो जाता है।

2. आनुपातिक या प्रतिशत विधि (Proportionate or Percentage Method)

- मॉंग की लोच को मापने की दूसरी विधि प्रतिशत विधि अथवा आनुपातिक विधि कहलाती है। इस विधि का वर्णन सबसे पहले डॉ0 मार्शल ने किया था। इस प्रणाली के अनुसार, मॉंग की लोच का अनुमान लगाने के लिए मॉंग में होने वाले आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन को कीमत में होने वाले आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन से भाग **(Divide)** दिया जाता है। इस विधि द्वारा मॉंग की लोच का माप निम्नलिखित सूत्रों की सहायता से ज्ञात होता है :

$$Ed = (-)\ \frac{\text{मांग में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$Ed = (-)\ \frac{\frac{\text{मांग की परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक मांग}} \times 100}{\frac{\text{कीमत में परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक कीमत}} \times 100}$$

$$Ed = (-)\ \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q}}{\frac{P_1 - P}{P}} = \frac{\frac{EQ}{Q}}{\frac{EP}{P}}$$

$$Ed = (-)\ \frac{EQ}{Q} \times \frac{P}{EP}$$

$$Ed = (-)\ \frac{P}{Q} \times \frac{EQ}{EP}$$

$$\text{मांग में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन} = \frac{\text{मांग की परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक मांग}} \times 100$$

$$\text{कीमत में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन} = \frac{\text{कीमत में परिवर्तन}}{\text{प्रारंभिक कीमत}} \times 100$$

यहाँ Q = प्रारंभिक मॉंग Q_1 = परिवर्तित मॉंग

P = प्रारंभिक कीमत P_1 = परिवर्तित कीमत

$EQ = Q_1 - Q$ (मॉंग में परिवर्तन)

$EP = P_1 - P$ (कीमत में परिवर्तन)

E डेल्टा परिवर्तन को प्रकट करता है

प्रश्न : जब आइसक्रीम की कीमत 4 रु. से कम होकर 2 रुपये प्रति आइसक्रीम हो जाती है तो माँग 1 आइसक्रीम से बढ़ कर 4 आइसक्रीम हो जाती है। प्रतिशत विधि द्वारा माँग की लोच ज्ञात करें।

3. बिन्दु लोच विधि या ग्राफिक विधि या ज्यामितीय विधि (Point Elasticity Method or Graphic Method or Geometric Method)

इस विधि का प्रयोग किसी रेखा या माँग वक्र के किसी विशेष बिन्दु को माँग की लोच ज्ञात करने के लिए किया जाता है। इस विधि की निम्न चित्र की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है इस चित्र में **MN** वक्र सीधी रेखा के रूप में दिखाई गई है। इस रेखा के किसी भी बिन्दु की माँग की लोच मालूम करने के लिए उस बिन्दु से रेखा के नीचे हिस्से को उस बिन्दु से ऊपर के हिस्से द्वारा भाग कर दिया जाता है।

$$\text{माँग की लोच} = \frac{\text{रेखा का बिन्दु से निचला भाग}}{\text{रेखा का बिन्दु से ऊपर का भाग}}$$

$$\text{या, Elasticity of Demand} = \frac{\text{Lower Segment}}{\text{Upper Segment}}$$

इस विधि से मालूम की गई एक माँग रेखा के विभिन्न बिन्दुओं पर माँग की लोच को आगे चित्र से ज्ञात होता है।

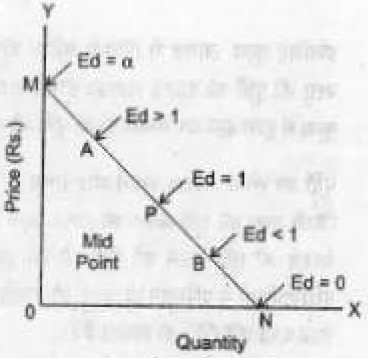

रेखा चित्र : 5.9

(i) माँग की इकाई लोच (Unitary) : यदि रेखा चित्र 5.9 में P बिन्दु रेखा के मध्य में स्थित है तो **PN = PM** इसलिए P बिन्दु पर

माँग की लोच $= \frac{PN}{PM} = 1$ होगी।

(ii) इकाई से अधिक या लोचदार माँग (More than Unitary) : यदि **A** बिन्दु मध्य बिन्दु **P** से ऊपर है तो निचला हिस्सा **AN** ऊपर के हिस्से **AM** से अधिक होगा। इसलिए **A** बिन्दु पर

माँग की लोच $\frac{AN}{AM} > 1$ होगी।

(iii) इकाई से कम या बेलोचदार माँग (Less than Unitary) : यदि **B** बिन्दु **P** से नीचे है तो निचला हिस्सा **BN** ऊपर के हिस्से **BM** से कम होगा। इसलिए **B** बिन्दु पर माँग की लोच $\frac{BN}{BM} < 1$ होगी।

प्रश्न :

1. माँग की लोच मापने का क्या सूत्र है ?

2.

कीमत **(Rs.)**	माँग (इकाइयाँ)	कुल व्यय **(Rs.)**
5	**4**	**20**
4	**5**	**20**

माँग की कीमत लोच क्या होगी ?

पूर्ति (Supply)

अर्थ

उत्पादन के क्षेत्र में पूर्ति का महत्वपूर्ण स्थान है। पूर्ति की मात्रा वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन पर निर्भर करती है। वस्तुओं को पूर्ति माँग की संतुष्टि के लिए होती है। उत्पादक माँग को ध्यान में रखकर ही वस्तुओं का उत्पादन करता है। बिना वस्तुओं और सेवाओं की पूर्ति के हमारी माँग तथा आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं हो सकती। उपभोग का सम्बन्ध माँग से है, पर उत्पादन का संबंध पूर्ति से है।

पूर्ति का अर्थ या अभिप्राय वस्तु की उस मात्रा से होता है, जिसे विक्रेता एक निश्चित मूल्य पर बेचने को तैयार होता है। मूल्य और पूर्ति का बहुत गहरा संबंध है। जिस प्रकार वस्तु का मूल्य उसकी माँग को प्रभावित करना है, उसी प्रकार उत्पादन के क्षेत्र में वस्तु का मूल्य उसकी पूर्ति को प्रभावित करता है। यदि वस्तु के मूल्य में वृद्धि हो जाए, तो उत्पादक पूर्ति की मात्रा को बढ़ा देगा। दूसरी ओर, यदि मूल्य में कमी हो जाए तो उत्पादक पूर्ति की मात्रा भी कम कर देगा। मूल्य के द्वारा ही उत्पादक का लाभ प्रभावित होता है।

लाभ = मूल्य - लागत

इसलिए मूल्य, लागत से जितना अधिक होगा, उत्पादक का लाभ भी बढ़ेगा। परिणामस्वरूप, ऊँचे मूल्य पर, लाभ की आशा में वस्तु की पूर्ति को बढ़ाना लाभप्रद होगा। लाभ की आशा में ही उत्पादक पूर्ति को बढ़ाता है यदि लाभ की आशा कम हो जाए (जो मूल्य में ह्रास होने पर सम्भव है) तो पूर्ति की मात्रा बाजार में घट जाएगी।

पूर्ति का संबंध व्यक्ति, स्थान और समय से भी है। एक दिए हुए समय में, एक निश्चित मूल्य पर उत्पादक एक निश्चित मात्रा में किसी वस्तु की पूर्ति करने को तत्पर होता है। यदि यह कहा जाए कि एक व्यापारी 100 रुपये क्विंटल की दर से 40 क्विंटल चावल की पूर्ति करने को तैयार है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि विशेष अवस्था में ही व्यापारी वैसा करेगा। यदि समय या परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाय, तो उससे पूर्ति भी प्रभावित होगी। जिस प्रकार माँग का स्वरूप बदलता है, उसी प्रकार पूर्ति का स्वरूप भी परिवर्तित हो सकता है।

पूर्ति तथा स्टॉक में अंतर (Distinction between Stock and Supply)

आम बोल चाल की भाषा में पूर्ति तथा स्टॉक शब्द का प्रयोग एक ही अर्थों में किया जाता है, परंतु अर्थशास्त्र में इन शब्दों के विभिन्न अर्थ होते हैं। किसी वस्तु का स्टॉक उस वस्तु की कुल मात्रा को बतलाता है जो किसी समय में बाजार में विक्रेता के पास मौजूद होती है। जबकि पूर्ति स्टॉक का वह भाग है जो कि विक्रेता एक निश्चित समय अवधि में तथा निश्चित कीमत पर बेचने को तैयार रहता है मानलीजिए मन्डी में जनवरी, 2005 में गेहूँ का स्टॉक 100 टन है तथा कीमत 500 रुपये / क्विंटल है। अगर इस कीमत पर विक्रेता 10 टन गेहूँ बेचने को तैयार है तो गेहूँ की पूर्ति केवल 10 टन होगी। इसी प्रकार यदि कीमत 600 रुपये प्रति क्विंटल हो जाने पर विक्रेता 50 टन गेहूँ बेचने को तैयार हो तो पूर्ति केवल 50 टन होगी।

पूर्ति को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Affecting Supply)

बहुत से ऐसे तत्व हैं जो पूर्ति को प्रभावित कर उसमें परिवर्तन लाते हैं। पूर्ति को प्रभावित करने वाले मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं -

1. वस्तु का मूल्य

पूर्ति एवं मूल्य में गहरा संबंध है तथा पूर्ति को प्रभावित करने वाला यह एक महत्वपूर्ण तत्व है। पूर्ति एवं मूल्य के संबंध को आगे पूर्ति के नियम में चर्चा करेंगे। मूल्य में वृद्धि होने पर पूर्ति में वृद्धि होती है तथा मूल्य में कमी होने पर पूर्ति में कमी होती है।

2. वस्तु की माँग

वस्तु की माँग भी वस्तु की पूर्ति को प्रभावित करता है यदि किसी वस्तु की माँग में लगातार वृद्धि हो तो उसे पूरा करने के लिए उत्पादक उत्पादन में वृद्धि करते हैं जिससे वस्तु की पूर्ति बढ़ती है। दूसरी ओर, वस्तु की माँग में कमी होने से प्रायः पूर्ति में कमी होने की प्रवृति पायी जाती है।

3. उत्पादन का पैमाना

उत्पादन का पैमाना भी वस्तु की पूर्ति को प्रभावित करता है। यदि उत्पादन बड़े पैमाना पर हो रहा हो तो पूर्ति की मात्रा में आवश्यकतानुसार तेजी से वृद्धि की जा सकती है। दूसरी ओर, उत्पादन का पैमाना छोटा होने पर पूर्ति में शीघ्र वृद्धि नहीं की जा सकती।

4. उत्पत्ति के साधनों की उपलब्धि एवं उनकी कीमत

वस्तु की पूर्ति उत्पत्ति के साधनों की उपलब्धि एवं उनकी कीमत को प्रभावित होती है। यदि भूमि, श्रम, पूंजी आसानी से उपलब्ध हो तो पूर्ति में वृद्धि की जा सकती है अन्यथा पूर्ति में वृद्धि करने में कठिनाई होती है। यह भी आवश्यक है कि साधन सस्ते एवं उचित मूल्य पर उपलब्ध हो। यदि साधन महंगे होंगे तो पूर्ति में वृद्धि नहीं की जा सकती है।

पूर्ति का नियम (Law of Supply)

पूर्ति के नियम से ज्ञात होता है कि 'अन्य बातें समान रहने पर' किसी वस्तु की कीमत तथा पूर्ति में धनात्मक संबंध **(Positive Relationship)** है। पूर्ति का नियम यह बतलाता है कि यदि अन्य बातें समान रहें तो किसी वस्तु का मूल्य बढ़ने पर उसकी पूर्ति बढ़ती है तथा मूल्य घटने पर उसकी पूर्ति घट जाती है।

पूर्ति का नियम वस्तु की कीमत में वृद्धि या कमी होने के कारण केवल पूर्ति के विस्तार तथा संकुचन की व्याख्या करता है। यह पूर्ति की वृद्धि या कमी की व्याख्या नहीं करता।

पूर्ति की नियम की व्याख्या

इस नियम की व्याख्या निम्नलिखित तालिका तथा चित्र की सहायता से की जा सकती है :

मूल्य (रू0) प्रति इकाई	वस्तु की पूर्ति (किलो में)
10 रुपए	1 किलो
20 रुपए	2 किलो
40 रुपए	6 किलो
60 रुपए	10 किलो
80 रुपए	15 किलो
100 रुपए	20 किलो

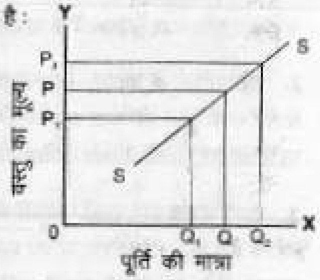

रेखा चित्र : 5.10

इस तालिका से स्पष्ट है कि जब वस्तु का मूल्य 10 रुपए से बढ़कर 100 रुपए हो जाती है तो वस्तु की पूर्ति 1 किलो से बढ़कर 20 किलो हो जाती है।

चित्र में पूर्ति वक्र **SS** के ऊपर की ओर ढलान से ज्ञात होता है कि वस्तु की कीमत बढ़ने पर पूर्ति भी बढ़ रही है। इस चित्र में **OX** रेखा पर पूर्ति की मात्रा तथा **OY** रेखा पर वस्तु के मूल्य को दिखाया गया है जब वस्तु का मूल्य **OP** है तो पूर्ति की मात्रा **OQ** है लेकिन जब मूल्य **OP** से बढ़कर OP_1 हो जाता है तो पूर्ति भी **OQ** से OQ_1 हो जाती है। इसी प्रकार जब मूल्य **OP** से घटकर OP_2 हो जाता है। तो पूर्ति भी **OQ** से घटकर OQ_2 हो जाती है।

लेकिन प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों होता है। दूसरे शब्दों में, पूर्ति का नियम लागू होने का कारण क्या है। किसी वस्तु की पूर्ति उत्पादकों द्वारा की जाती है। उत्पादक सर्वदा यही प्रयत्न करता है कि उसे अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो। अतः मूल्य बढ़ने पर उत्पादक पूर्ति को इसलिए बढ़ाते हैं क्योंकि उन्हें अधिक मुनाफा होता है तथा मूल्य घटने पर मुनाफे में कमी होने के कारण वे पूर्ति को घटा देते हैं। पूर्ति के नियम के लागू होने का एक कारण और है। मूल्य बढ़ाने से जब मुनाफा बढ़ता है तो नए-नए उत्पादक भी व्यवसाय में मुनाफा कमाने के लिए प्रवेश कर जाते हैं जो वस्तु के उत्पादन को बढ़ाकर उसकी पूर्ति को बढ़ा देते हैं। दूसरी ओर मूल्य और मुनाफे में कमी होने से कुछ उत्पादक व्यवसाय को छोड़कर चले जाते हैं जिससे उत्पादन और पूर्ति में कमी होती है।

मान्यताएँ

1. उत्पादन के साधनों की पूर्ति तथा कीमत में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
2. उत्पादन की तकनीक में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
3. फर्म के उद्देश्य में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
4. अन्य वस्तुओं की कीमत में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए।
5. भविष्य में वस्तु की कीमत में परिवर्तन होने की संभावना नहीं होनी चाहिए।

पूर्ति के नियम के अपवाद तथा सीमाएँ

माँग के नियम के समान पूर्ति के नियम के भी कुछ अपवाद हैं:

1. मन्दी के समय में : जब बाजार में मंदी की अवस्था उत्पन्न हो जाती है, तो व्यापारी गिरते हुए मूल्य पर भी वस्तुएँ बेचना चाहता है तथा माल निकाल देना चाहता है।

2. प्रतियोगिता के कारण : जब बाजार में प्रतियोगिता बढ़ जाती है, तब बाजार से अपने प्रतिद्वन्द्वी को निकाल बाहर करने के विचार से भी कोई उत्पादक बहुत कम मूल्य पर अधिक-से-अधिक मात्रा में अपनी वस्तु की खपत बढ़ाना चाहता है जिससे बाजार पर उसका अधिकार हो जाए। प्रतिद्वन्द्वी के निकल जाने के बाद उसका स्थान सुरक्षित हो जाता है।

3. जल्द खराब होने वाली वस्तुओं के सम्बन्ध में : जल्द खराब होने वाली वस्तुओं को अधिक समय तक स्टॉक में रखना संभव नहीं है इस कारण वैसी वस्तुओं को निश्चित अवधि में ही खपा देना आवश्यक है। इसलिए गिरते हुए मूल्य पर भी उत्पादक इन वस्तुओं, जैसे- दूध, सब्जी, मछली आदि की पूर्ति करेगा।

4. भविष्य में मूल्य में गिरावट आने की आशंका होने पर : यदि भविष्य में मूल्य में कमी आने की आशंका हो तो उत्पादक गिरते हुए मूल्य पर भी अधिक मात्रा में वस्तुएं बेचना पसंद करेगा। पर ऐसा वह विशेष अवस्थाओं और विशेष वस्तुओं के ही संबंध में करता है। बाजार की स्थिति का पूरी तौर से अध्ययन कर लेने के बाद ही वह ऐसा निर्णय लेता है।

अभ्यास

1. नीचे माँग के लिए आवश्यक पाँच तत्वों को लिखिए :

(क)

(ख)

(ग)

(घ)

(ङ)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

(क) किसी वस्तु के मूल्य में .... होने से उसकी माँग में वृद्धि होती है।

(ख) मूल्य में कमी होने से क्रेताओं की संख्या में .... होती है।

(ग) जिन वस्तुओं की हमें आदत पड़ जाती है उनकी माँग की लोच ________ होती है।

(घ) किसी वस्तु के मूल्य वृद्धि होने से उसकी पूर्ति में .... होती है।

(ङ) जब किसी वस्तु का मूल्य घटता है तो उत्पादको का मुनाफा ______________ है।

3. लघु उत्तरीय प्रश्न

(क) माँग की परिभाषा दें।

(ख) माँग किन तत्वों द्वारा निर्धारित होती है ?

(ग) पूर्ति से आप क्या समझते हैं ?

4. दिर्घ उत्तरीय प्रश्न

(क) माँग के नियम की सोदाहरण व्याख्या करें। इस नियम की क्या सीमाएं हैं ?

(ख) लोचदार माँग तथा बेलोचदार माँग में अंतर स्पष्ट करें।

(ग) माँग की लोच मापने की कौन-सी विधि को आप अच्छा समझते हैं ?

(घ) पूर्ति के नियम का सोदाहरण व्याख्या करें।

*****

मुद्रा एवं बैंकिंग

अंग्रेजी भाषा का शब्द **'Money'** लैटिन भाषा के शब्द **'Moneta'** से बना है। मोनेटा देवी जूनो **(Goddess Juno)** का उपनाम है जो प्राचीन रोम में स्वर्ग की देवी मानी जाती है। वहाँ देवी के मन्दिर में सिक्कों की ढलाई की जाती थी। हिन्दी में 'मुद्रा' शब्द का प्रयोग मुहर या चिह्न के अर्थ में भी किया जाता है। वर्तमान समय में मुद्रा से अभिप्राय राज्य द्वारा जारी उस संकेत या चिह्न से है जिसके द्वारा देश में संपूर्ण लेन-देन संपन्न होता है।

मुद्रा का विकास -

विनिमय की प्रारंभिक अवस्था में प्रत्यक्ष विनिमय प्रणाली प्रचलित थी जिसे वस्तु विनिमय अथवा अदला-बदली प्रणाली **(Barter System)** कहा जाता था। इस प्रणाली में किसी वस्तु या सेवा के बदले अन्य किसी वस्तु या सेवा में लेन-देन किया जाता था। इसके लिए पशुओं (गाय, घोड़ा, बकरी आदि) तथा वस्तुओं (दूध, खाद्यान्न, रत्न, सोना, चाँदी, कांस्य, ताँबा आदि) का खरीद बिक्री के लिए इस्तेमाल किया जाता था। जैसे-जैसे सभ्यताएँ विकसित होती गयीं, वस्तु विनिमय प्रणाली अपनी कठिनाइयों और असुविधाओं के कारण अनुपयुक्त सिद्ध होने लगी। वस्तु विनिमय प्रणाली के तहत विभिन्न प्रकार की कठिनाइयाँ जैसे- आवश्यकताओं के दोहरे संयोग का अभाव, वस्तु-विभाजन में कठिनाई, मूल्य हस्तांतरण में कठिनाई, भविष्य में भुगतान की कठिनाई आदि प्रमुख थे। वस्तु विनिमय प्रणाली की इन्हीं कठिनाइयों एवं उसमें व्याप्त असुविधा ने 'मुद्रा' को जन्म दिया।

आज के युग में 'मुद्रा' विनिमय का सर्वाधिक प्रचलित साधन है। हमारे व्यवहारिक जीवन की समस्त आर्थिक क्रियाएँ मुद्रा पर आधारित हैं। आज धातु के सिक्के, पत्र-मुद्रा, साख मुद्रा (चेक, ड्राफ्ट, ट्रेजरी चालान आदि) तथा प्लास्टिक मुद्रा (डेबिट कार्ड एवं क्रेडिट कार्ड) आदि के मुद्रा सर्वाधिक प्रचलित रूप हैं।

अमेरिकी डॉलर, ब्रिटिश पाउंड, जापानी येन व यूरोपीय संघ की मुद्रा यूरो की तरह भारतीय रुपये की भी अपना अलग पहचान चिह्न निर्धारित कर लिया गया है। देवनागरी के 'र' एवं रोमन अक्षर 'आर' से मिलते-जुलते प्रतीक चिह्न '₹' को रुपये के **Symbol** के रूप में सरकार ने 15 जुलाई 2010 को मान्यता प्रदान कर दी। अभी हाल ही में इसे कम्प्यूटर की **'Keyboard'** पर भी जगह दी गयी है। इस प्रकार भारतीय रुपया विश्व की पाँचवी ऐसी मुद्रा है जिसकी अपनी पहचान चिह्न है। इसकी रचना **I.I.T** मुंबई के डी. उदय कुमार ने की है।

देश	मुद्रा	प्रतीक चिह्न
अमेरिका	डॉलर	$
ग्रेट ब्रिटेन	पाउंड	£
जापान	येन	¥
यूरोपीय संघ	यूरो	€
भारत	रुपया	₹

मुद्रा की परिभाषाएँ (Definitions of Money)

सामान्य व्यक्तियों के लिए मुद्रा का अर्थ भारतीय रुपया, अमेरिकी डॉलर, ब्रिटिश पाउंड आदि हैं किन्तु अर्थशास्त्र में मुद्रा का अर्थ ज्यादा व्यापक है। इसे मुद्रा की परिभाषाओं के माध्यम से समझा जा सकता है। विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा दी गयी मुद्रा की परिभाषाओं को अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से तीन वर्गों में विभक्त किया जाता है -

1. वर्णनात्मक अथवा कार्यवाहक परिभाषाएँ
2. वैधानिक परिभाषाएँ
3. सामान्य स्वीकृति पर आधारित परिभाषाएँ

1. वर्णनात्मक अथवा कार्यवाहक परिभाषाएँ (Descriptive or Functional Definitions)

इस वर्ग की परिभाषाएँ मुद्रा के कार्यों का वर्णन करती हैं। इस श्रेणी की सबसे प्रसिद्ध परिभाषा हार्टले विदर्स ने दी है।

हार्टले विदर्स (Hartley withers) के अनुसार, "मुद्रा वह है जो मुद्रा का कार्य करें।" **Money is what money does"**

कोलबोर्न (Coulborn) के अनुसार, "मुद्रा वह है जो मूल्य का मापक और भुगतान का साधन है।" **"Money may be defined as the means of Valuation and Payment".**

2. वैधानिक परिभाषाएँ (Legal Definitions)

इस वर्ग में वे परिभाषाएँ आती हैं, जो वैधानिक मान्यताओं पर आधारित है।

नैप (Knapp) के अनुसार, "कोई भी वस्तु जो राज्य द्वारा मुद्रा घोषित कर दी जाती है, मुद्रा कहलाती है।" **"Any thing which is declared by state as money, becomes money".**

3. सामान्य स्वीकृति पर आधारित परिभाषाएँ (General Acceptability Definitions)

इस वर्ग में वे परिभाषाएँ आती हैं जो सामान्य स्वीकृति अथवा सर्वग्राहयता पर बल देती है।

सैलिंगमैन (Seligman) के अनुसार, "मुद्रा वह वस्तु है जिसे सामान्य स्वीकृति प्राप्त है।" **"Money is one thing that possesses general acceptability."**

कीन्स (Keynes) के अनुसार, "मुद्रा वह है जिसको देकर ऋण तथा मूल्य सम्बन्धी भुगतानों को निबटाया जाता है तथा जिसके रूप में सामान्य क्रय-शक्ति का संचय किया जाता है।" **"Money is that by delivery of which debt contracts and price contracts are discharged and in the shape of which a store of general purchasing power is held."**

मुद्रा की उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन के पश्चात् इसकी उचित परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है - मुद्रा एक ऐसी वस्तु है जो विनिमय के माध्यम, मूल्य के मापन, स्थगित भुगतान के मान तथा मूल्य के संचय के माध्यम के रूप में स्वतंत्र, विस्तृत तथा सामान्य रूप से लोगों द्वारा स्वीकार की जाती है। इस प्रकार, मनुष्य के व्यवहारिक जीवन के समस्त आर्थिक कार्य मुद्रा द्वारा किया जाता है। अब मुद्रा के कार्यों को हम विस्तार से जानेंगे।

मुद्रा के कार्य (Functions of Money)

आधुनिक जीवन में मुद्रा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अभाव में कोई भी अर्थव्यवस्था अपने कार्यों को सामान्य रूप से संचालित नही कर सकती। प्रायः सारी आर्थिक गतिविधियों का उद्देश्य मुद्रा के रूप में आय या लाभ अर्जित करना होता है। मुद्रा की सहायता से ही हम अपनी आवश्यकतानुसार वस्तुओ और सेवाओं का उपयोग कर सकते है। वस्तुतः मानव जीवन का कोई ऐसा पक्ष नही है जो मुद्रा द्वारा प्रभावित नहीं होता हो। स्पष्टतः मुद्रा के कार्य काफी विस्तृत है। इसके विभिन्न कार्यों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है -

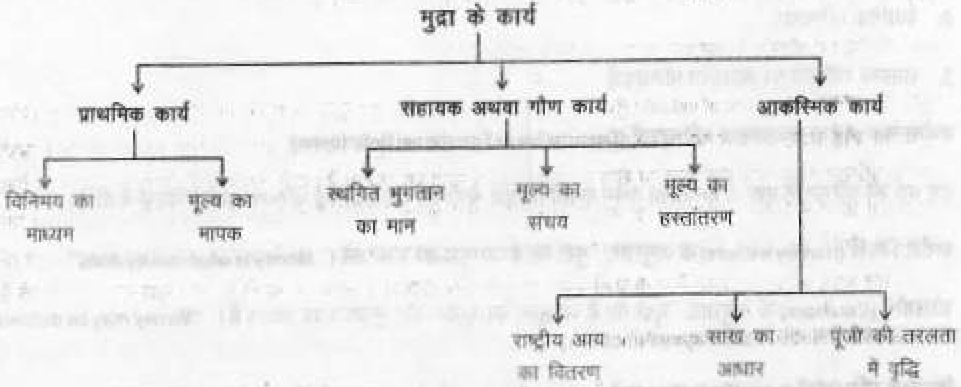
मुद्रा के कार्य
प्राथमिक कार्य
सहायक अथवा गौण कार्य
आकस्मिक कार्य
विनिमय का माध्यम
मूल्य का मापक
स्थगित भुगतान का मान
मूल्य का संचय
मूल्य का हस्तांतरण
राष्ट्रीय आय का वितरण
साख का आधार
पूंजी की तरलता में वृद्धि

यद्यपि उपरोक्त सारे कार्य मुद्रा द्वारा संपादित किए जाते हैं किन्तु इसके चार प्रमुख कार्यों को अंग्रेजी की दो पंक्तियों द्वारा खुबसूरती से व्यक्त किया जाता है।

"Money is a Matter of functions four
A medium, a measure, a standard, a store"

मुद्रा के है चार कार्य महान,
माध्यम, मापन, संचय, भुगतान।

प्राथमिक कार्य (Primary Functions)

इसके तहत वे कार्य सम्मलित होते हैं जो मुद्रा ने सदैव सम्पन्न किए है तथा आर्थिक विकास में अहम भूमिका निभाई है। इसलिए इन्हें आधारभूत **(Fundamental)** कार्य अथवा आवश्यक **(Essential)** कार्य भी कहा जाता है।

1. **विनिमय का माध्यम (Medium of Exchange) :** यह मुद्रा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है, क्योंकि हमारा संपूर्ण आर्थिक जीवन विनिमय पर ही आधारित है। मुद्रा के आविष्कार से पूर्व वस्तु विनिमय का प्रचलन था। लेकिन, इसके अंतर्गत वस्तुओं का आदान-प्रदान तभी किया जा सकता है, जब दो व्यक्तियों की पारस्परिक आवश्यकताओं में समानता हो। मुद्रा के आविष्कार के कारण अब आवश्यकताओं के दोहरे संयोग (आदान-प्रदान) के अभाव की कठिनाइयां उत्पन्न नहीं होती। अब वस्तुओं तथा सेवाओं के आदान-प्रदान (क्रय-विक्रय) में मुद्रा मध्यस्थ का कार्य करती है। आधुनिक युग में सम्पूर्ण व्यापारिक कार्य मुद्रा के माध्यम से ही होता है।

दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि एक मौद्रिक प्रणाली के अंतर्गत मुद्रा मध्यस्थ की भूमिका निभाती है। यही कारण है कि इसे विनिमय का माध्यम कहा जाता है। चूंकि मुद्रा सर्वमान्य एवं विधिग्राहय **(Legal Tender)** भी होती है इसीलिए मुद्रा को स्वीकार

करने में किसी को कोई कठिनाई नहीं होती। इसने विनिमय के कार्य को आसान बना दिया है। विनिमय के माध्यम के रूप में यह हमें निम्न प्रकार से मदद करती है -

(i) इसने वस्तु-विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों से हमें निजात दिलायी।

(ii) मुद्रा-विनिमय ने व्यापार को विस्तार दिया है। आज इसके कई रूप प्रचलित है, जैसे - कागजी मुद्रा, प्लास्टिक मुद्रा, ई-व्यवसाय आदि। इससे समय और श्रम की बचत भी होती है।

(iii) विनिमय के माध्यम के रूप में मुद्रा के आगमन ने उपभोक्ताओं को स्वतंत्रता प्रदान की है।

(iv) राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को सर्व सुलभ बना दिया है।

2. **मूल्य का मापक (Measure of value) :** मुद्रा का दूसरा कार्य यह है कि यह मूल्य के मापन का कार्य करती है। वस्तु विनिमय में मूल्य का कोई सामान्य मापदण्ड नहीं था। परिणामस्वरूप विनिमय का मूल्य निश्चित करने में बहुत अधिक कठिनाई आती थी। जबकि वर्तमान समय में प्रत्येक वस्तु या सेवा का मूल्य मुद्रा में मापा जा सकता है। यही कारण है कि मूल्य को मापने के लिए मुद्रा का प्रयोग करते हैं जिस कारण आर्थिक गणना का कार्य काफी सरल हो गया है। उदाहरण के लिए जिस प्रकार हम पानी को मापने के लिए लिये लीटर, बिजली को मापने के लिए किलोवाट, तापमान मापने के लिए डिग्री सेल्सियस, तौल मापने के लिये किलोग्राम आदि का प्रयोग करते हैं ठीक उसी प्रकार वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य को मापने के लिए मुद्रा का प्रयोग करते हैं।

सहायक अथवा गौण कार्य (Secondary Functions)

मुद्रा के गौण कार्य के अन्तर्गत वे कार्य आते हैं जो प्राथमिक कार्यों की सहायता के लिए किये जाते हैं। इसीलिए इन्हें सहायक या गौण कार्य कहा जाता है। मुद्रा के तीन गौण कार्य निम्न प्रकार के है -

1. **स्थगित भुगतान का मान (Standard of Defferred Payments) :** व्यापार के अन्तर्गत जिन लेन-देनों का भुगतान तत्काल न करके भविष्य के लिए स्थगित कर दिया जाता है, तो उसे स्थगित भुगतान कहा जाता है। जिसके तहत मुद्रा में अन्य वस्तुओं की तुलना में इसका मूल्य स्थिर रहता है। इसमें सामान्य स्वीकृति **(General Acceptability)** का गुण होने के कारण इसकी आवश्यकता हर समय रहती है। साथ ही साथ वस्तुओं की तुलना में यह अधिक टिकाऊ **(Durable)** होता है।

2. **मूल्य का संचय (Store of Value) :** मनुष्य की यह प्रवृत्ति है कि वह अपनी वर्तमान आय में से कुछ भाग बचाकर भविष्य के लिए संचित करके रखना चाहता है, ताकि वह अपनी भावी आवश्यकताओं को सरलता पूर्वक पूरा कर सके। मुद्रा में यह गुण विद्यमान है क्योंकि उसकी उपयोगिता कभी नष्ट नहीं होती है। मुद्रा के संचय में वस्तु की तुलना में कम स्थान का उपयोग होता है। वर्तमान युग में मुद्रा के इस कार्य का विशेष महत्व है, क्योंकि धन के संचय को संभव बनाकर मुद्रा पूँजी के संचय को संभव बनाती है। जो किसी भी देश के आर्थिक तथा औद्योगिक विकास की आधारशिला है।

3. **मूल्य का हस्तान्तरण (Transfer of Value) :** मुद्रा विनिमय का एक तरल साधन है। मुद्रा द्वारा मूल्य का हस्तान्तरण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति और एक स्थान से दूसरे स्थान तक सरलतापूर्वक किया जा सकता है। सामान्य स्वीकृति का गुण होने के कारण मुद्रा मूल्य के हस्तान्तरण का सर्वोत्तम साधन बन गयी है।

आकस्मिक कार्य (Contingent Functions)

प्राथमिक तथा गौण कार्यों के अतिरिक्त मुद्रा के कुछ आकस्मिक कार्य भी है। ये कार्य निम्नांकित हैं -

1. **राष्ट्रीय आय का वितरण (Distribution of National Income) :** अर्थव्यवस्था में उत्पादन का कार्य सामूहिक रूप से किया जाता है। इस सामूहिक उत्पादन में उत्पादन के विभिन्न साधन - भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन तथा साहस की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उत्पादन के इन सभी साधनों को उनके योगदान के अनुरूप उचित पारिश्रमिक दिया जाना आवश्यक है और उनके पारिश्रमिक का आकलन मुद्रा के रूप में ही करते हैं। मुद्रा के होने से ही समस्त राष्ट्रीय आय की गणना मुद्रा में ही की जाती है।

2. **साख का आधार (Basis of Credit) :** आधुनिक अर्थव्यवस्था में साख की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज साख पत्रों का उपयोग मुद्रा की ही भाँति किया जाता है। नकद कोषों के आधार पर ही बैंक साख का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि आधुनिक युग में साख को व्यवसाय का प्राण माना गया है।

3. **पूँजी की तरलता में वृद्धि (Increase in Liquidity of Capital) :** मुद्रा एक महत्वपूर्ण परिसम्पत्ति है, जिसके तहत सारी सम्पत्तियों का लेखा-जोखा मुद्रा में किया जाता है। उदाहरण स्वरूप - भूमि, भवन, मशीनरी, स्टॉक, शेयर, फर्नीचर आदि सभी मुद्रा से कभी भी खरीदी या बेची जा सकती है। अतः यह मुद्रा ही है जो सब प्रकार की सम्पत्ति को तरलता प्रदान करती है।

मुद्रा के कार्यों को सही ढंग से संचालित करने में बैंक की अहम भूमिका होती है। मुद्रा का बैंक के साथ परस्पर संबंध होने के कारण ही लोगों के समस्त वित्तीय कार्य सही तरीके से सम्भव हो पाते हैं।

बैंक (Bank)

'बैंक' शब्द का प्रयोग काफी समय से होता आ रहा है। ऐसा माना जाता है कि यह इटालियन भाषा के शब्द बैंको (Banco) से बना है जो फ्रेंच भाषा के **'Banke'** से बदलता हुआ अंग्रेजी में **'Bank'** हो गया है। **'Banco'** का अर्थ बैंच होता है। चूँकि इटली में लोग बैंचों पर बैठकर मुद्रा परिवर्तन का कार्य करते थे, अतः बैंक का प्रयोग इसी संदर्भ में किया जाने लगा। सबसे पहले सन् 1157 ई0 में इटली के शहर वीनस में **बैंक ऑफ वीनस** की स्थापना हुई थी। आधुनिक ढंग के बैंकों का विकास भी यूरोप से ही प्रारम्भ हुआ।

बैंक की परिभाषाएँ (Definitions of Bank)

सामान्य व्यक्तियों के लिए बैंक का अर्थ एक ऐसी वित्तीय संस्था से है जहाँ 'मुद्रा' को जमा एवं उसकी निकासी का कार्य किया जाता हो। किन्तु अर्थशास्त्र में बैंक का अर्थ ज्यादा व्यापक है। बैंक को अनेक विद्वानों ने विभिन्न तरीके से परिभाषित किया है। इनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

किनले (Kinley) के अनुसार, "बैंक वह संस्था है जो आवश्यकता पड़ने पर उसकी सुरक्षा को ध्यान में रखकर लोगों को उधार देती है तथा जिन लोगों को धन की आवश्यकता नहीं रहती वे अपने अतिरिक्त धन को उसके पास जमा करते हैं।"

क्राउथर (Crowther) के अनुसार, "बैंकर अपने तथा अन्य लोगों के ऋणों का व्यवसायी होता है, अर्थात् बैंकर का व्यवसाय अन्य लोगों से ऋण लेना और बदले में अपने ऋण देना और इस प्रकार मुद्रा का सृजन करना है।"

डॉ0 एच.एल. हार्ट (Dr. H.L. Hart) के अनुसार, "बैंक वह संस्था है जो अपने साधारण व्यापार के व्यवहार में धन प्राप्त करता है तथा उसे उन व्यक्तियों को उनके चैकों **(Cheques)** का आदर करके लौटा देता है जिनसे वह राशि प्राप्त हुई है, अथवा जिनके खातों में वह राशि जमा की गयी है।"

बैंकिंग कम्पनी अधिनियम, 1949 के अनुसार, "बैंक या बैंकिंग कम्पनी वह संस्था है जो जनता को उधार देने के लिए या इसका विनियोग करने के लिए मुद्रा को जमा **(Deposits)** पर प्राप्त करती है तथा जो इसको मांगने पर चैक, ड्राफ्ट आदेश अथवा अन्य किसी प्रकार से भुगतान करती है।"

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि बैंक एक ऐसी संस्था है जो ग्राहकों एवं सामान्य जनता की धनराशि को जमा करने, उन्हें ऋण देने और अन्य सेवाएँ प्रदान करने का कार्य करती है।

इन सभी के अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि बैंक वह संस्था है जो धन का आदान-प्रदान करती है। बैंक ऐसे व्यक्तियों से धन जमा कर लेती है जिनके पास वह अतिरिक्त रूप में है। इसके लिये बैंक उन्हें ब्याज **(Interest)** भी देती है। बैंक उस धन को एकत्र कर उन व्यक्तियों को उधार देती है जो उस धन को अधिक उपयोगी कार्य में लगा सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों से कुछ अधिक ब्याज वसूल करती हैं रुपया उधार लेने व देने में जो ब्याज का अन्तर होता है, वही बैंक का लाभ होता है अर्थात् बैंक कम ब्याज पर लोगों से धन जमा कर प्राप्त करती है और अधिक ब्याज पर उन्हें उधार देती है। यह ब्याज का अन्तर ही बैंक का लाभ होता है। इस प्रकार बैंक एक साधारण दुकान की भांति होती है जो रुपये-पैसे का क्रय-विक्रय करती है।

बैंकों के प्रकार (Types of Bank)

आधुनिक युग विशिष्टीकरण का युग माना जाता है। छोटे से छोटे कार्यों के लिये भी विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती है। बैंकिंग कारोबार में इन विशिष्टीकरण का बहुत बड़ा योगदान है। विभिन्न प्रकार के आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के बैंक कार्य कर रहे हैं। कार्यों की विभिन्नता के आधार पर बैंकों को निम्न रूप से वर्गीकृत किया जाता है -

1. व्यापारिक या व्यावसायिक बैंक (Commercial Banks)

व्यापारिक बैंक से आशय ऐसे बैंक से है जो जनता से विभिन्न प्रकार के खाते खोलकर (जैसे- बचत खाता, चालू खाता, स्थायी जमा खाता, आवर्ति जमा खाता) धन जमा करते हैं और जमा धन से व्यापारियों, उद्योगपतियों व अन्य लागों को अल्पकालीन तथा मध्यकालीन ऋण प्रदान करते हैं। बैंक जमा राशि पर कम दर से ब्याज देते हैं और दिये गये ऋणों पर अधिक दर से ब्याज वसूल करते हैं। ब्याज का अन्तर ही इनकी आय का प्रमुख स्रोत होता है। व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों के प्रति अन्य सेवाएँ प्रदान करते हैं, उनके बदले वह शुल्क प्राप्त करते हैं। आजकल सार्वजनिक, निजी तथा विदेशी बैंक भी व्यवसायिक बैंक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

(i) सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक (Public Sector Bank) : इन बैंकों का स्वामित्व, प्रबन्ध और नियन्त्रण सरकार के पास होता है। सरकार के अधीन होने के नाते इन्हें सरकार की नीतियों के अनुसार सामाजिक उद्देश्यों के लिए वित्तीय सुविधाएँ भी प्रदान करनी पड़ती है। भारत के प्रमुख व्यापारिक बैंक जो सार्वजनिक क्षेत्र में काम कर रहे हैं; उनमें स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, बैंक ऑफ बड़ौदा, सैंट्रल बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, केनरा बैंक, बैंक ऑफ इंडिया, यूनियन बैंक आदि प्रमुख हैं।

(ii) निजी क्षेत्र के बैंक (Private Sector Bank) : ये बैंक निजी स्वामियों के स्वामित्व, प्रबन्ध एवं नियन्त्रण में होते हैं। ये बैंक बाजार की शक्तियों के अनुसार अपनी नीति निर्धारण में स्वतंत्र होते हैं। **Axis Bank, ICICI Bank, Indusland Bank** एवं **HDFC Bank** आदि निजी क्षेत्र के बैंक हैं।

(iii) विदेशी बैंक (Foreign Bank) : विदेशी बैंक का स्वामित्व एवं प्रबन्ध विदेशियों के पास होता है। हमारी उदारीकरण की नीति के कारण ही इन विदेशी बैंकों का आगमन हुआ। प्रमुख विदेशी बैंक, जो भारत में कार्य कर रहे हैं - **Yes Bank, City Bank, Bank of America, Standard Chartered Bank, American Express Bank** एवं **HSBC Bank** आदि है।

2. केन्द्रीय बैंक (Central Bank)

केंद्रीय बैंक से आशय ऐसे बैंक से है जो अपने देश की मौद्रिक एवं बैंकिंग संगठनों की शीर्षस्थ संस्था **(Apex Body)** होता है। यह देश का सबसे प्रमुख बैंक होता है। आज प्रायः सभी देशों का अपना एक केंद्रीय बैंक होता है। इसे बैंकों का बैंक **(Banker's**

Bank) भी कहा जाता है। भारत का केन्द्रीय बैंक रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया **(Reserve Bank of India)** है।

3. सहकारी बैंक (Co-operative Bank)

इस बैंक का प्रमुख कार्य किसानों की अल्पकालीन आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। भारतीय किसानों को महाजन के चंगुल से छुड़ाने में इन बैंकों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके अतिरिक्त सहकारी बैंक देश में सहकारी भावना को जागृत करने का प्रयत्न भी करते हैं। भारत जैसे विकासशील देशों में इन बैंकों का काफी महत्वपूर्ण योगदान है।

4. औद्योगिक बैंक (Industrial Bank)

ये बैंक औद्योगिक उपक्रमों के निर्माण, उनका विस्तार, बड़े-बड़े उपकरणों तथा मशीनों की खरीद तथा नवीनीकरण आदि के लिए बड़ी मात्रा में दीर्घकालीन ऋणों की व्यवस्था करते हैं। भारत में औद्योगिक वित्त निगम भारतीय उद्योगों को दीर्घकाल के लिए ऋण प्रदान करता है।

5. विदेशी विनिमय बैंक (Foreign Exchange Bank)

विदेशी व्यापार के लिए विदेशी विनिमय की व्यवस्था करना होता है। यह एक ऐसी संस्था है जो विभिन्न देशों की मुद्रा का पारस्परिक रूप से विनिमय संभव कराती है, इसे ही विदेशी विनिमय बैंक के नाम से जाना जाता है ये बैंक प्रायः देश के बन्दरगाहों अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर स्थित होते हैं तथा वहीं से अपना कारोबार करते हैं। भारत में वाणिज्यिक बैंक भी विदेशी विनिमय का व्यवसाय करते हैं।

6. भूमि विकास बैंक (Land Development Bank)

इनकी स्थापना सर्वप्रथम 1882 ई० को फ्रांस में हुई थी। ये बैंक किसानों को दीर्घकालीन ऋण की व्यवस्था करते हैं। इनका मुख्य कार्य किसानों की भूमि को गिरवी रखकर उन्हें नई भूमि खरीदने तथा उसमें स्थायी सुधार करने आदि के लिए ऋण देना है। भारत में पहले इन्हें भूमि बंधक बैंक **(Land Mortgage Bank)** कहा जाता था। आजकल इन्हें भूमि विकास बैंक **(Land Development of Bank : LDB)** कहा जाने लगा है।

7. निर्यात-आयात बैंक (Export Import Bank of India) EXIM Bank

इस बैंक का प्रमुख कार्य निर्यात-आयात में लगे व्यवसायियों को सहायता प्रदान करना है। यह बैंक वित्तीय संस्थाओं एवं वाणिज्यिक बैंकों को पुनर्वित्त **(Refinancing)** की सुविधा प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, यह बैंक विदेशों में संयुक्त उपक्रमों की स्थापना के लिए तथा मशीनों एवं अन्य उपकरणों को आयात-निर्यात करने के लिए भी ऋण प्रदान करता है। इसके साथ-साथ यह बैंक निर्यात बिलों को क्रय करने व कटौती करने का भी कार्य करता है। भारत में 1 जनवरी 1982 को आयात-निर्यात बैंक की स्थापना की गयी थी। इसका मुख्यालय **मुम्बई** में है।

8. कृषि बैंक (Agricultural Banks)

कृषि बैंकों से आशय उन बैंकों से है जो कृषि कार्यों के लिए ऋण प्रदान करते हैं। खाद, बीज और खेती के छोटे-बड़े उपकरण आदि की खरीद करने के लिए अल्पकालीन ऋण प्रदान करते हैं तथा ट्रैक्टर, बड़े मशीन आदि को खरीदने के लिए दीर्घकालीन ऋण प्रदान करते हैं। भारत में 1975 से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित किए गये हैं और सर्वोच्च संस्था के रूप में जुलाई 1982 में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक **(NABARD)** की स्थापना की गयी है।

व्यापारिक या व्यवसायिक बैंकों के कार्य (Functions of Commercial Banks)

ये बैंक सम्पूर्ण बैंकिंग प्रणाली का एक अंग होते हैं जो केन्द्रीय बैंक के नियन्त्रण में कार्य करते हैं। इन बैंकों का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है। ये बैंक प्रायः आम जनता अथवा ग्राहकों के लिये होते हैं, और इनका स्वामित्व सरकारी या गैर-सरकारी हो सकता है। इसिलिए इसे जनता का बैंकर कहा जाता है। प्रायः यह देखा जाता है कि अनेक व्यापारिक बैंक परस्पर प्रतियोगिता करते हैं। अर्थात् हम यह कह सकते है कि व्यापारिक बैंक वह वित्तीय संस्था है जो लोगों के रुपये को अपने पास जमा के रूप में स्वीकार करते हैं और उनको उपभोग अथवा निवेश के लिए उधार देते हैं।

व्यवसायिक बैंकों के कार्य निम्न प्रकार के हैं -

व्यावसायिक बैंकों के कार्य

- जमा स्वीकार करना
  - सावधि जमा खाता
  - चालू जमा खाता
  - बचत जमा खाता
  - आवृत्ति जमा खाता
- ऋण देना
  - नकद साख
  - अधिविकर्ष
  - ऋण एवं अग्रिम
  - विनिमय पत्रों की कटौती
- एजेन्ट के रूप में कार्य
  - विभिन्न मदों का एकत्रीकरण और भुगतान
  - प्रतिभूतियों की खरीद एवं ब्रिक्री
  - ट्रस्टी एवं प्रबन्धक
  - विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय
- सामान्य उपयोगिता के कार्य
  - लॉकर की सुविधा
  - यात्री चैक एवं साख प्रमाण-पत्र
  - व्यापारिक सूचनाएँ एवं आँकड़े
  - वस्तुओं के वाहन में सहायता
  - अन्य कार्य

1. जमा स्वीकार करना (Accepting Deposits)

व्यापारिक बैंक जनता के धन को जमा करता है। व्यक्ति अपनी सुविधा और शक्ति के अनुसार निम्नलिखित खातों में रुपया जमा कर सकते हैं -

(i) सावधि खाता (Fixed Account) : इस खाते में एक निश्चित अवधि के लिये रुपया जमा किया जाता है। जमाकर्त्ता को जमा की रकम की रसीद दे दी जाती है। इसमें जमाकर्त्ता का नाम, जमा की राशि, ब्याज की दर तथा जमा की अवधि लिखी होती है। यह रसीद हस्तांतरणीय (Transferable) नहीं होती। यदि जमाकर्त्ता को अपनी रकम की आवश्यकता अवधि पूर्ण होने से पहले पड़ जाती है तो कुछ कटौती या ब्याज (Discount or Interest) काटकर बैंक उसे रकम लौटा देता है। इस खाते पर ब्याज की दर अन्य खातों की तुलना में अधिक होती है। जमा की अवधि जितनी लंबी होती है ब्याज की दर भी उतनी ऊँची होती है। इसका कारण यह है कि बैंक इस रकम को लंबे समय तक प्रयोग कर सकते हैं।

(ii) चालू खाता (Current Account) : इस खाते में जमाकर्त्ता जितनी बार चाहे रुपया जमा कर सकता है और कभी भी आवश्यकतानुसार निकाल सकता है। इस खाते का उपयोग साधारणतया व्यापारी वर्ग करते हैं। इन खातों में जमा धन पर बैंक ब्याज नहीं देती है। यदि जमा की रकम एक न्यूनतम आवश्यक राशि से कम होती है तो बैंक द्वारा जमाकर्त्ता के खाते से सेवा व्यय (Service Charge) के रूप में वसूल कर सकता है।

(iii) बचत खाता (Saving Account) : इन खातों की व्यवस्था विशेष रूप से उन लोगों के लिए की जाती है जिनकी बचतें छोटी होती हैं और जिन्हें बैंक से अपनी जमा रकम बहुत बार निकालने की आवश्यकता नहीं होती। इस खाते में ब्याज की दर कम होती है। यह खाता प्रायः वेतनभोगी, गृहस्थ तथा सामान्य आय वाले व्यक्तियों द्वारा खोला जाता है। बचत खाता के संचालन के लिए खाताधारियों को चेक की सुविधा प्रदान की जाती है।

(iv) आवृत्ति खाता (Recurring Account) : इस प्रकार के खाते में जमाकर्त्ता द्वारा एक निश्चित रकम, निश्चित समय जैसे-12, 24, 36, 60, 120 महीनों के लिए प्रतिमाह जमा करते हैं। यह रकम कुछ विशेष परिस्थितियों के अलावा निर्धारित समय से पहले नहीं निकाली जा सकती है। इस खाते में सावधि खाते की तरह ही अन्य सभी खातों की तुलना में अधिक ब्याज प्राप्त होता है।

2. ऋण देना (Advancing of Loans)

बैंक का दूसरा मुख्य कार्य लोगों को ऋण देना है। बैंक के पास जो रुपया जमा के रूप में आता है उसमें से एक निश्चित राशि नकद कोष में रखकर बाकी रुपया बैंक द्वारा उधार दे दिया जाता है। ये बैंक प्रायः लोगों को उत्पादक कार्यों के लिए ऋण प्रदान करते हैं, और उनसे उचित जमानत (Security) की माँग करते हैं। उचित मापदण्डों को पूरा करने के पश्चात् ही लोगों को निम्न प्रकार से ऋण प्रदान करते हैं। ऋण की रकम प्रायः जमानत के मूल्य से कम हुआ करती है।

(i) नकद साख (Cash Credit) : इसके अन्तर्गत ऋणी को निश्चित जमानत के आधार पर एक निश्चित राशि निकालने का अधिकार दे दिया जाता है। इस सीमा के अन्दर ही ऋणी आवश्यकतानुसार रूपया निकालता रहता है तथा सुविधानुसार जमा भी करता है। इस अवस्था में बैंक केवल वास्तव में निकाली गई राशि पर ही ब्याज लेता है।

(ii) अधिविकर्ष (Overdraft) : बैंक में चालू जमा खाता रखने वाले ग्राहक बैंक से एक समझौते के अनुसार अपनी जमा से अधिक रकम निकालने की अनुमति ले लेते हैं। इस निकाली गई अधिक राशि को ही अधिविकर्ष (Overdraft) कहते हैं। यह सुविधा अल्पकाल के लिए विश्वसनीय ग्राहकों को ही मिलती है। उदाहरण - यदि एक चालू जमा खाता में किसी व्यक्ति के नाम 20,000 रु0 जमा है और उसको बैंक 25,000 रु0 तक के चेक काटने का अधिकार दे देता है, तो यही 5,000 रु0 ओवरड्राफ्ट रकम कहलायेगा।

(iii) ऋण एवं अग्रिम (Loans & Advances) : ऋण तथा अग्रिम एक निश्चित धनराशि के रूप में दिये जाते हैं। बैंक ऋणदाता के खाते में ऋण की रकम जमा कर देता है। ऋणदाता उसे अपनी इच्छानुसार कभी भी निकाल सकता है। बैंक केवल स्वीकृत (Alloted) ऋण राशि पर ब्याज लेता है।

(iv) विनिमय पत्रों की कटौती (Discounting of Bills of Exchange) : व्यापारिक बैंक आवश्यकता पड़ने पर अपने ग्राहकों के विनिमय पत्रों की अवधि पूर्ण होने से पहले ही उन विनिमय-पत्रों के आधार पर रुपया उधार देता है। बैंक इनसे बाजार दर पर ब्याज लेता है और विनिमय-पत्रों की अवधि पूर्ण होने पर उनकी धनराशि वसूल कर लेता है।

3. एजेण्ट के रूप में कार्य (Functions as an Agent)

एजेण्ट संबंधी कार्य के अंतर्गत वे कार्य आते हैं जो बैंक अपने ग्राहक के आदेशानुसार उसकी ओर से करता है और इन कार्यों के लिए वह कमीशन **(Commission)** लेता है जो उसकी आय का एक महत्वपूर्ण साधन है। ऐसे कुछ महत्वपूर्ण कार्य इस प्रकार के हैं-

(i) विभिन्न मदों का एकत्रीकरण एवं भुगतान (Collection and payments of various items) : व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों की तरफ से चैक, किराया, ब्याज, लाभ आदि एकत्रित करने का कार्य करते हैं और ग्राहकों की ओर से करों, बीमा, ब्याज आदि का भुगतान करते हैं।

(ii) प्रतिभूतियों की खरीद एवं बिक्री (Purchase and sale of securities) : व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों के लिए प्रतिभूतियाँ, शेयर, बॉण्ड्स आदि खरीदते हैं। इनके कीमतों की जानकारी भी वे अपने ग्राहकों को समय-समय पर प्रदान करते हैं, और ग्राहकों के आदेशानुसार इन्हें बेचने का कार्य भी करते हैं।

(iii) ट्रस्टी एवं प्रबन्धक (Trustee & Executor) : बैंक अपने ग्राहकों के निर्देशानुसार उनकी सम्पत्ति के ट्रस्टी, सलाहकार एवं प्रबन्धक के रूप में भी कार्य करते हैं।

(iv) विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय (Purchase and sale of Foreign Exchange) : केन्द्रीय बैंक के निर्देशानुसार ये व्यापारिक बैंक विदेशी मुद्राओं **(Foreign Currencies)** को खरीदते-बेचते हैं। इस प्रकार यह केन्द्रीय बैंक के एजेण्ट के रूप में भी कार्य करते हैं।

4. सामान्य उपयोगिता के कार्य (General Utility Functions)

वर्तमान समय में व्यापारिक बैंक उपर्युक्त सेवाओं के अतिरिक्त अन्य बहुत सी सुविधाएँ ग्राहकों तथा सर्वसाधारण के लिए उपलब्ध कराते हैं -

(i) लॉकर की सुविधा (Locker Facilities) : बैंकर्स अपने ग्राहकों के लिए लॉकर्स की सुविधा भी प्रदान करते हैं जिनमें लोग अपने इच्छानुसार सोना-चाँदी, जेवरात तथा अन्य आवश्यक कागजात सुरक्षित रखते हैं। इस सुविधा के लिए बैंक वार्षिक किराया लेता है, जो काफी कम होता है।

(ii) यात्री चैक एवं साख प्रमाण-पत्र (Travellers Cheque & Letters of Credit) : बैंक अपने ग्राहकों को यात्रा में जाते समय नकद राशि साथ न ले जाकर सुविधा और सुरक्षा की दृष्टि से ग्राहकों को यात्री चैक, साख प्रमाण-पत्रों की सुविधा प्रदान करते हैं। हाल में इसके चलन में कमी आयी है।

(iii) व्यापारिक सूचनाएँ एवं आँकड़े (Business Information and Statistics) : बैंक वर्तमान आर्थिक स्थिति से परिचित होने के कारण व्यापार सम्बन्धी सूचनाएँ एवं आँकड़े एकत्रित करके अपने ग्राहकों को वित्तीय मामलों पर सलाह देते हैं।

(iv) वस्तुओं के वाहन में सहायता (Helping in Transportaiton of goods) : बड़े-बड़े व्यापारी अपने ग्राहकों को माल भेजकर उसकी बिल्टी बैंक में भेज देते हैं। खरीददार बैंक में रुपये जमा करवाकर उस बिल्टी को छुड़वा लेते हैं और रेलवे स्टेशन से माल

ले लेते हैं इस प्रकार बैंक वस्तुओं को उत्पादन केन्द्रों से उपभोग केन्द्रों तक माल को पहुँचाने में सहायता देते हैं।

(v) अन्य कार्य : उपर्युक्त कार्यों के अलावा बैंक अपने ग्राहकों को तकनीकी आधारित सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। जैसे - डेबिट एवं क्रेडिट कार्ड प्रदान करना। चलन्त **ATM** और बैंक-बायोमेट्रिक कार्ड, ई-बैंकिंग आदि के माध्यम से बैंक-व्यापार को प्रोत्साहन, रोजगार में वृद्धि, निवेश को बढ़ावा देने का कार्य भी करते हैं।

केन्द्रीय बैंक (Central Bank)

केन्द्रीय बैंक देश का सर्वोच्च बैंक होता है जो देश की संपूर्ण बैंकिंग प्रणाली का निर्धारण एवं नियंत्रण करता है। केन्द्रीय बैंक देश का शिखर बैंक **(Apex Bank)** होता है, जो मुद्रा बाजार का नेतृत्व करने के साथ-साथ देश के व्यापारिक बैंकों पर नियंत्रण रखता है। यह सरकार के बैंक का कार्य करता है तथा मुद्रा की पूर्ति को नियंत्रित करता है। केन्द्रीय बैंक देश की मौद्रिक नीति का निर्माता एवं संचालक होता है। यह देश में आर्थिक स्थिरता एवं आर्थिक विकास बनाये रखने के लिए उत्तरदायी होता है।

देश	केन्द्रीय बैंक
भारत	भारतीय रिजर्व बैंक
अमेरिका	फेडरल रिजर्व
ब्रिटेन	बैंक ऑफ इंग्लैंड

भारत में भारतीय रिजर्व बैंक, इंग्लैंड में बैंक ऑफ इंग्लैंड और अमेरिका में फेडरल रिजर्व, केन्द्रीय बैंक हैं। संसार का सबसे पहला केन्द्रीय बैंक सन् 1668 ई0 में स्वीडन में स्थापित हुआ था, परन्तु वास्तव में केन्द्रीय बैंक का आरंभ सन् 1694 ई0 में बैंक ऑफ इंग्लैंड की स्थापना के बाद हुआ है। केन्द्रीय बैंक की परिभाषा निम्न प्रकार से दी गई है -

सैम्युअलसन के अनुसार, यह अर्थव्यवस्था, मुद्रा की पूर्ति तथा साख को नियन्त्रित करने का कार्य करता है।"

डी0कॉक के अनुसार, "केन्द्रीय बैंक वह बैंक है जो देश की मौद्रिक तथा बैंकिंग प्रणाली के शिखर पर होता है।"

आर0पी0केण्ट के अनुसार, "केन्द्रीय बैंक एक ऐसी संस्था है जिसे सामान्य जन कल्याण के हित में मुद्रा की मात्रा का विस्तार तथा संकुचन करने का उत्तरदायित्व दिया गया है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि केन्द्रीय बैंक देश का शीर्ष बैंक है, जो देश की मौद्रिक एवं बैंकिंग व्यवस्था का नियन्त्रण एवं संचालन करता है। इसका प्रमुख उद्देश्य राष्ट्र हित में बैंकिंग प्रणाली का संचालन करना है। इनपर सरकार का स्वामित्व होता है। इसका उद्देश्य लाभ कमाना नहीं बल्कि सरकार के बैंकर के रूप में सरकार की ओर से लेन-देन करना है।

भारतीय रिजर्व बैंक (Reserve Bank of India)

यह भारत का केन्द्रीय बैंक है। इसकी स्थापना रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम, 1934 के तहत् 1 अप्रैल 1935 को हुई। 1 जनवरी, 1949 को इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। भारतीय रिजर्व बैंक का मुख्यालय मुम्बई में हैं 2, 5, 10, 20, 50, 100, 500, 1000 रु0 के नोटों का निर्गमन रिजर्व बैंक के द्वारा किया जाता है। इन करेन्सी नोटों पर रिजर्व बैंक के गवर्नर का हस्ताक्षर होता है। वर्तमान समय में भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री रघुराम राजन हैं।

केन्द्रीय बैंक के कार्य (Functions of Central Bank)

केन्द्रीय बैंक के कार्य निम्न प्रकार के हैं -

1. नोट निर्गमन का एकाधिकार (Monopoly in Note Issue)

वर्तमान समय में संसार के प्रत्येक देश में नोट छापने का एकाधिकार केन्द्रीय बैंक को होता है। ये छपे हुए नोट पूरे देश में सर्वमान्य होते हैं। केन्द्रीय बैंक द्वारा जारी किए गए नोट सारे देश में असीमित विधिग्राह्य **(Unlimited legal tender)** रूप में घोषित होते हैं।

2. सरकार का बैंक (Banker to the Government)

केन्द्रीय बैंक सभी देशों में सरकार के बैंकर, एजेंट एवं वित्तीय परामर्शदाता के रूप में कार्य करते हैं। व्यापारियों और सामान्य व्यक्तियों की भाँति सरकार को भी बैंकिंग सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है। केन्द्रीय बैंक सरकार के बैंक के रूप में वे सभी कार्य करता है जो एक व्यापारिक बैंक अपने ग्राहक के लिए करता है। यह सरकारी विभागों के खाते रखता है तथा सरकारी कोषों की व्यवस्था करता है। आवश्यकतानुसार सरकार को ऋण देता है, तथा सरकारी कोषों का भी हस्तांतरण करता है। देश का सर्वोच्च बैंक होने के नाते यह सरकार को आर्थिक, वित्तीय एवं मौद्रिक विषयों पर समय-समय पर सलाह देता रहता है।

3. बैंकों का बैंक (Banker's Bank)

केन्द्रीय बैंक का अन्य बैंकों के साथ लगभग वही संबंध होता है जो एक साधारण बैंक का अपने ग्राहकों के साथ होता है। केन्द्रीय बैंक अन्य बैंकों के नकद कोष **(Cash Reserve)** का कुछ भाग अपने पास जमा के रूप में रखता है, ताकि ग्राहकों की माँग होने पर वह उनके धन की अदायगी कर सके। व्यापारिक बैंक इस प्रकार के नकद कोष को दो प्रकार से रखते हैं। प्रथम, अपने पास नकद कोष, दूसरे, केन्द्रीय बैंक के पास जमा के रूप में रखते हैं। ये बैंक केन्द्रीय बैंक के पास रखे गए कोष को भी नकद कोष मानते हैं।

4. बैंकों का निरीक्षण (Supervision of Banks)

बैंकों का बैंक होने के कारण केन्द्रीय बैंक, वाणिज्यिक बैंकों का निरीक्षण भी करता है। इसके तहत व्यापारिक बैंकों को लाइसेंस जारी करना, देश-विदेश के विभिन्न भागों में व्यापारिक बैंकों की शाखाएँ खुलवाकर उनका विस्तार करना, व्यापारिक बैंकों का आपस में विलयन **(Merger)** की अनुमति देना आदि कार्य करते हैं।

5. अन्तिम ऋणदाता (Lender of the Last Resort)

देश के अन्य बैंकों के लिए केन्द्रीय बैंक अंतिम ऋणदाता के रूप में भी कार्य करता है। इसका अर्थ यह है कि जब किसी व्यापारिक बैंक को कहीं से भी ऋण प्राप्त न होता हो तब वह केन्द्रीय बैंक से ऋण की माँग करता है और केन्द्रीय बैंक उचित मापदण्डों के आधार पर उसे ऋण दे देता है। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक अंतिम ऋणदाता के रूप में देश की बैंकिंग व्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित करता है।

6. विदेशी विनिमय कोषों का संरक्षक (Custodian of Foreign Exchange Reserves)

केन्द्रीय बैंक अन्तर्राष्ट्रीय कोष के संरक्षक के रूप में भी कार्य करता है। देश की मुद्रा इकाई के बाहरी मूल्य को स्थिर रखना केन्द्रीय बैंक का महत्वपूर्ण कार्य है। इसको सफलतापूर्वक संपन्न करने के लिए केन्द्रीय बैंक विदेशी मुद्राओं के कोष संचित रखता

है। इनके अतिरिक्त केन्द्रीय बैंक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास तथा विनिमय दर की स्थिरता के लिए भी विदेशी कोषों को उचित मात्रा में बनाए रखता है।

7. समाशोधन गृह का कार्य (Function of Clearing House)

केन्द्रीय बैंक के समाशोधन गृह के कार्य का अर्थ है कि वह विभिन्न बैंकों के एक-दूसरे के आपसी लेन-देन को न्यूनतम नकदी के साथ निपटारा कर देती है। क्योंकि प्रत्येक बैंक के कोष तथा खाते केन्द्रीय बैंक के पास होते हैं, इसलिए केन्द्रीय बैंक सरलतापूर्वक व्यापारिक बैंकों के लिए समाशोधन गृह का कार्य करती है।

8. साख नियन्त्रण (Credit Control)

केन्द्रीय बैंकों का सबसे महत्वपूर्ण कार्य व्यापारिक बैंकों की साख संबंधी क्रियाओं का नियंत्रण करना है। साख नियन्त्रण से अभिप्राय साख मुद्रा की मात्रा में देश की मौद्रिक आवश्यकताओं के अनुसार कमी या वृद्धि करने से है। साख मुद्रा का आवश्यकता से अधिक प्रसार होने पर मुद्रा स्फीति **(Inflation)** की दशा उत्पन्न हो जाती है और कम होने पर मुद्रा अवस्फीति **(Deflation)** के दोष पैदा हो जाते हैं। यही कारण है कि केन्द्रीय बैंक साख मुद्रा को निश्चित सीमाओं के अन्दर रखने का प्रयास करता है। केन्द्रीय बैंक द्वारा साख मुद्रा का उचित नियंत्रण करने से देश के सामान्य कीमत स्तर में स्थिरता लायी जा सकती है तथा उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि की जा सकती है। साख नियंत्रण के लिए केन्द्रीय बैंक अन्य कार्य भी करते हैं।

9. आँकड़े इकट्ठा करना (Collection of Statistics)

केन्द्रीय बैंक आर्थिक सूचनाओं एवं आँकड़ों को इकट्ठा करता है और उन्हें समय-समय पर प्रकाशित करता है। यह देश में बैंकिंग, मुद्रा तथा विदेशी विनिमय संबंधी जो आँकड़े प्रकाशित करता है उनसे देश की आर्थिक प्रगति की गति का बहुत कुछ ज्ञान हो जाता है। देश में आर्थिक योजनाओं को सफल बनाने के लिए ये सूचनाएँ तथा आँकड़े काफी विश्वसनीय माना जाता है।

10. अन्य कार्य (Other Fenction)

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त केन्द्रीय बैंक के कुछ अन्य कार्य भी हैं जो निम्न प्रकार है -

(i) कृषि वित्त

(ii) कटे-फटे एवं पुराने नोट वापस लेना

(iii) बैंकों का सर्वेक्षण

(iv) अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं से संबंध, आदि।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

1. सही विकल्प चुने :

(i) मुद्रा विकास क्रम का सही अनुक्रम कौन सा है ?

(क) वस्तु मुद्रा, पत्र मुद्रा, धातु मुद्रा
(ख) साख मुद्रा, धातु मुद्रा, पत्र मुद्रा, वस्तु मुद्रा
(ग) वस्तु मुद्रा, धातु मुद्रा, पत्र मुद्रा, साख मुद्रा
(घ) इनमें से कोई नहीं

(ii) निम्न में किसने परिभाषित किया "मुद्रा वह है जो मुद्रा का कार्य करें।"

(क) कौलबोर्न
(ख) सैलिंगमैन
(ग) नैप
(घ) हार्टले विदर्स

(iii) जनता का बैंक कौन-सा है ?

(क) व्यापारिक बैंक
(ख) केन्द्रीय बैंक
(ग) रिजर्व बैंक
(घ) इनमें से कोई नहीं

(iv) व्यापारिक बैंक के प्राथमिक कार्य निम्न में कौन-सा है ?

(क) जमाएँ स्वीकार करना
(ख) ऋण देना
(ग) साख निर्माण
(घ) उपयुक्त सभी

(v) व्यापारिक बैंकों द्वारा स्वीकार की जाने वाली प्रमुख जमाएँ कौन-सी है ?

(क) चालू जमा
(ख) बचत जमा
(ग) सावधि जमा
(घ) उपयुक्त सभी

(vi) व्यापारिक बैंक निम्न में किस प्रकार के ऋण देते हैं ?

(क) नकद साख
(ख) अधिविकर्ष
(ग) ऋण एवं अग्रिम
(घ) उपयुक्त सभी

(vii) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया किस क्षेत्र का बैंक है ?

(क) निजी क्षेत्र
(ख) सार्वजनिक क्षेत्र
(ग) विदेशी क्षेत्र
(घ) सहकारी क्षेत्र

(viii) बैंक का एजेन्सी कार्य क्या है ?

(क) ऋण देना
(ख) जमा स्वीकार करना
(ग) ट्रस्टी का कार्य करना
(घ) लॉकर सुविधा देना

(ix) भारत का केन्द्रीय बैंक है ?

(क) रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया
(ख) पंजाब नेशनल बैंक
(ग) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया
(घ) सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया

(x) निम्न में कौन-सा कथन सही है ?

(क) केन्द्रीय बैंक देश का सर्वोच्च बैंक है।

(ख) केन्द्रीय बैंक पर सरकार का स्वामित्व होता है।

(ग) केन्द्रीय बैंक देश में बैंकिंग प्रणाली का संचालन करता है।

(घ) उपयुक्त सभी

(xi) केन्द्रीय बैंक द्वारा कौन-सी मुद्रा जारी की जाती है ?

(क) चलन मुद्रा (ख) साख मुद्रा

(ग) सिक्के (घ) उपयुक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)

(i) .... प्रणाली में इच्छाओं का दोहरा संयोग आवश्यक है।

(ii) माध्यम, मापन, संचय, ... मुद्रा के चार महान कार्य है।

(iii) मुद्रा वह है जिसे सामान्य .... प्राप्त है।

(iv) बैंक शब्द की उत्पत्ति इटालियन भाषा के ____________ से हुई है।

(v) H.D.F.C., I.C.I.C.I. .... बैंक के उदाहरण है।

(vi) जापान की मुद्रा .... है।

(vii)__________ को EXIM बैंक की स्थापना हुई।

(viii)केन्द्रीय बैंक देश का .... बैंक होता है।

(ix) रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया का राष्ट्रीयकरण .... ई0 को हुआ।

(x) ___________ बैंकों का बैंक होता है।

3. लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Question)

(i) मुद्रा से आप क्या समझते हैं ?

(ii) वस्तु विनिमय प्रणाली क्या है ?

(iii) मुद्रा के दो कार्य बतायें ?

(iv) EXIM बैंक क्या है ?

(v) व्यापारिक बैंक से आप क्या समझते हैं ?

(vi) अधिविकर्ष से क्या समझते हैं ?

(vii)केन्द्रीय बैंक का क्या अर्थ है ?

(viii)रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के दो प्रमुख कार्य बतायें ?

4. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Questions)

(i) मुद्रा के चार महान कार्यों की व्याख्या करें।

(ii) मुद्रा के कार्यवाहक परिभाषा को विस्तार पूर्वक वर्णन करें।

(iii) व्यापारिक बैंक के प्रकारों का विस्तारपूर्वक वर्णन करें।

(iv) बैंक किस प्रकार ऋण प्रदान करते हैं ?

(v) एक अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास में व्यापारिक बैंकों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

(vi) व्यापारिक बैंक के प्रमुख कार्यों का वर्णन करें।

(vii) केन्द्रीय बैंक की परिभाषा दें एवं इसके कार्यों की व्याख्या करें।

(viii) केन्द्रीय बैंक किस प्रकार व्यापारिक बैंक से भिन्न होता है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

1. (i) ग, (ii) घ, (iii) क, (iv) घ, (v) घ, (vi) घ, (vii), ख, (viii) ग, (ix) क, (x) घ, (xi) क

2. (i) वस्तु-विनिमय, (ii) भुगतान, (iii) स्वीकृति, (iv) बैंको (Banco), (v) निजी, (vi) येन (vii) 1 जनवरी 1982, (viii) शीर्ष (APEX), (ix) 1 जनवरी 1949, (x) केन्द्रीय बैंक

*****

परियोजना कार्य **(PROJECT WORK)**

शिक्षक की सहायता से खाली जगहों को भरें :

देश	मुद्रा
इटली	
जर्मनी	
रूस	
फ्रांस	
कनाडा	
जर्मनी	
नेपाल	
पाकिस्तान	

देश	केन्द्रीय बैंक का नाम
पाकिस्तान	
रूस	
फ्रांस	
कनाडा	
जर्मनी	

भारत का विदेशी व्यापार

वर्तमान समय में कोई भी देश विदेशी व्यापार के बिना अपनी अर्थव्यवस्था का विकास नहीं कर सकता। अविकसित या विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए विदेशों से कुछ कच्चे माल, मशीनरी, उपकरण आदि के आयात की आवश्यकता पड़ती है। आयातों के मूल्य चुकाने के लिए ऐसे देश अपने निर्यात में वृद्धि करने का प्रयत्न करते हैं ताकि वे विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकें। इसी तरह विकसित देशों की आर्थिक प्रगति को बनाए रखने के लिए भी विदेशी व्यापार की आवश्यकता पड़ती है। विकसित देश अपने उत्पादित माल का निर्यात कर विदेशी मुद्रा प्राप्त करते हैं तथा उन्हें अन्य देशों से अपने उद्योगों के लिए कुछ कच्चे पदार्थ तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का आयात भी करना पड़ता है। यानि विकसित अथवा अविकसित दोनों प्रकार के देशो के आर्थिक विकास में विदेशी व्यापार का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

घरेलू एवं विदेशी व्यापार का अर्थ

व्यापार शब्द का प्रयोग प्रायः क्रय-विक्रय के अर्थ में किया जाता है। व्यापार दो प्रकार के होते हैं :

(i) आंतरिक अथवा घरेलू व्यापार **(Internal Trade)**, तथा

(ii) अन्तर्राष्ट्रीय अथवा विदेशी व्यापार **(International or foreign Trade)**

जब किसी देश की सीमाओं के अंतर्गत ही व्यापार किया जाता है तो उसे आंतरिक व्यापार या घरेलू व्यापार कहते हैं। जैसे पटना में उत्पादित कोई वस्तु दिल्ली, बनारस, मुम्बई आदि स्थलों पर बिकती है तो उसे आंतरिक व्यापार कहेंगे। जबकि, विभिन्न राष्ट्रों के बीच होनेवाले व्यापार को विदेशी व्यापार कहेंगे।

भारतीय व्यापार की पृष्ठभूमि

स्वतंत्रता के पूर्व भारत के विदेशी व्यापार की संरचना मुख्यतः एक कृषि प्रधान औपनिवेशिक देश की थी। भारत मुख्य रूप से कच्चे पदार्थों एवं खाद्यान्नों का निर्यात करता था। कच्चे पदार्थों में मैंगनीज, अभ्रक आदि के निर्यात की प्रधानता थी तथा कृषि पदार्थों में गेहूँ, जूट, चाय, कपास आदि का निर्यात होता था।

इस अवधि में भारत मुख्य रूप से निर्मित वस्तुओं का आयातक था जिसमें मोटर, साइकिल, इंजन, दवा, मशीन, यंत्र तथा रासायनिक पदार्थ आदि प्रमुख थे। विदेशी व्यापार आयात एवं निर्यात दोनों में ब्रिटेन की ही प्रधानता थी क्योंकि उस समय भारत, ब्रिटेन का एक उपनिवेश था।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समाप्त होने के बाद भारत के विदेशी व्यापार में आमूल परिवर्तन हुए। युद्ध काल समाप्त होते ही उपभोक्ता एवं पूँजीगत दोनों प्रकार के मालों की मांग बढ़ने लगी। साथ ही, युद्धकाल से ही देश के अन्तर्गत खाद्यान्न के अभाव की समस्या उपस्थित थी जिसे दूर करने के लिए विदेशों से अत्यधिक मात्रा में अन्न को आयात करने की आवश्यकता आ पड़ी। यानि, युद्ध के पश्चात् आयात में अत्यधिक वृद्धि हुई किन्तु निर्यात में इस दर से वृद्धि नहीं हुई। फलस्वरूप, भारत का व्यापारिक संतुलन प्रतिकूल होने लगा। इससे विदेशी विनिमय-सम्बन्धी कठिनाइयाँ उपस्थित हो गयीं। इन्हें दूर करने के लिए विदेशी व्यापार पर अनेक प्रकार के नियंत्रण लगाए गए।

देश विभाजन ने भारत की विदेशी व्यापार-सम्बन्धी कठिनाइयाँ बहुत बढ़ा दी। देश-विभाजन के कारण जूट, कपास तथा अधिक

अन्न उपजाने वाले क्षेत्रों के पाकिस्तान में चले जाने से भारत के विदेशी व्यापार के ढाँचे में आमूल परिवर्तन हो गए। विभाजन के पूर्व भारत जूट तथा कपास का मुख्य रूप से निर्यातक देश था किन्तु विभाजन के बाद, वह इन वस्तुओं का मुख्य रूप से आयातक बन गया। साथ ही, देश के अंतर्गत खाद्यान्न की पूर्ति पर भी देश के विभाजन का स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ा। विभाजन के फलस्वरूप देश के अंतर्गत निर्यात की अपेक्षा आयात में अत्यधिक वृद्धि हुई जिससे व्यापारिक संतुलन और भी अधिक प्रतिकूल होने लगा।

वर्तमान समय में हमारे विदेशी व्यापार यानि आयात एवं निर्यात की प्रकृति पूर्णतः बदल गई है। अब हमारे आयातों में उपभोक्ता पदार्थों की मात्रा क्रमशः कम हो रही है तथा मशीन, उपकरण, उर्वरक, खनिज तेल आदि की मात्रा बढ़ गई है। इसी प्रकार हमारे निर्यातों की प्रकृति में भी परिवर्तन हुआ है तथा हम निर्मित वस्तुओं का भी बड़े पैमाने पर निर्यात करने लगे हैं। इसके साथ ही हमारे आयात एवं निर्यात की वस्तुओं की संख्या में भी बहुत वृद्धि हुई है। वर्तमान में हमारे आयात की वस्तुओं की संख्या 8,250 तथा निर्यात की जानेवाली वस्तुओं की संख्या 9,300 से भी कुछ अधिक हो गई है।

भारत के आयात एवं निर्यात

पंचवर्षीय योजनाओं के आरंभ होने के बाद भारत की आयात-संबंधी आवश्यकताओं में बहुत परिवर्तन हुआ है। स्वतंत्रता पूर्व भारत मुख्यतया निर्मित वस्तुओं का आयातक था परन्तु योजनाकाल में आधारभूत उद्योगों की स्थापना तथा देश के तीव्र औद्योगिकीकरण के लिए हमें भारी मात्रा में औद्योगिक मशीनों, परिवहन उपकरणों एवं विद्युत संयंत्रों का आयात करना पड़ा। कृषि एवं उद्योगों के विकास के लिए उर्वरक, कच्चे पदार्थ एवं मध्यवर्ती वस्तुओं का आयात भी आवश्यक हो गया। किसी भी देश के विदेशी व्यापार की संरचना पर गौर करने से हमें उस देश की विकास प्रक्रिया के साथ-साथ उसके आर्थिक विकास के स्तर के विषय में भी पता चलता है।

आयोजन काल में आयात और निर्यात दोनों ही के स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं जिन्हें समझने के लिए विभिन्न समय बिन्दुओं पर आयात और निर्यात की वस्तुओं पर गौर करना होगा।

आयातों की संरचना (Composition of Imports)

आजादी के बाद से अब तक की अवधि में हमारे आयात की संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिलता है।

1947-48 में भारत के प्रमुख आयात थे- सभी प्रकार की मशीनरी, तेल, अनाज दालें व आँटा, कपास, वाहन, कटलरी, लोहे का सामान, औजार व उपकरण, दवाइयाँ, रंग, सूत तथा सूती कपड़ा, कागज, कागज के बोर्ड, लोहा व इस्पात आदि। कुल आयातों में इन सबका हिस्सा 70 प्रतिशत से ज्यादा था।

आर्थिक आयोजन प्रारंभ होने के समय पूँजीगत वस्तुओं का आयात अधिक नहीं था। परन्तु दूसरी योजना के अंतर्गत आधारभूत उद्योगों की स्थापना को जब प्राथमिकता दी गई तो देश से बड़े पैमाने पर पूँजीगत उपकरणों का आयात शुरू हुआ।

आयात संरचना के बारे में मुख्य तथ्य निम्नलिखित हैं :

1. पेट्रोलियम तेल और लुब्रिकेंट पर आयात व्यय में तेजी से वृद्धि हुई है 1960-61 में पेट्रोलियम तेल और लुब्रिकेंट का आयात व्यय में हिस्सा 6.1 प्रतिशत था जो 1980-81 में बढ़कर 41.9 प्रतिशत हो गया। 2011-12 में पेट्रोलियम तेल और लुब्रिकेंट का हिस्सा 35.3 प्रतिशत हो गया।

2. अलौह धातुओं के आयात पर 2007-08 में 21,336 मिलियन डालर खर्च किए गए जो कुल आयात व्यय का 8.9 प्रतिशत है।

3. गैर विद्युतीय मशीनरी व उपकरण पर आयात व्यय में तेजी से वृद्धि हुई। इसमें 1970-71 में जहाँ 341 मिलियन डालर खर्च किए गए वहीं यह बढ़कर 2007-08 में 19,661 मिलियन डालर हो गया।

4. जवाहरात और आभूषण उद्योग की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए मोती व बहुमूल्य रत्नों के आयात में तेज वृद्धि हुई। 1993-94 में मोती व बहुमूल्य रत्नों का कुल आयात में हिस्सा 11.3 प्रतिशत था।

5. बढ़ती हुई घरेलू मांग के कारण कुछ वर्षों मे खाद्य तेलों का भी काफी मात्रा में आयात करना पड़ा है। 2007-08 मे खाद्य तेलों का आयात कुल आयात का 1.1 प्रतिशत था।

6. लोहा और इस्पात के बढ़ते हुए घरेलू उत्पादन के बावजूद काफी मात्रा मे आयात करना पड़ता है क्योंकि मांग की तुलना में घरेलू उत्पादन कम है। कुल राशि के रूप मे लोहा और इस्पात पर आयात व्यय 1970-71 में 194 मिलियन डालर से बढ़कर 2007-08 में 8,684 मिलियन डालर हो गया।

7. उर्वरकों पर भी आयात व्यय में काफी वृद्धि हुई है। 1970-71 मे जहाँ यह 113 मिलियन डालर थी वह 2007-08 में 5,406 मिलियन डालर हो गया।

8. अर्थव्यवस्था की घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कई वर्षों तक खाद्यान्नों का काफी मात्रा में आयात करना पड़ा है 1960-61 में कुल आयात व्यय मे इनका हिस्सा 16 प्रतिशत था। बाद के वर्षों में खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि होने से आयात में तेजी से कमी आई। हालाँकि कुछ वर्षों मे खाद्यानों के भंडार मे वृद्धि करने के लिए उनका आयात किया गया। 2010-11 में कुल 119 मिलियन डालर मूल्य के अनाज और अनाज उत्पादो का आयात किया गया।

निर्यातों की संरचना (Composition of Exports)

भारतीय निर्यातों की संरचना पर ध्यान देने पर यह प्रवृत्ति स्पष्ट होती है कि समय के साथ निर्यातों में कृषि व उससे संबंध वस्तुओं का मूल्य घटता गया है तथा विनिर्मित वस्तुओं का महत्व बढ़ता गया है।

सारणी : भारतीय निर्यातों की संरचना

वस्तुएँ	1960-61 (प्रतिशत में)	2010-11 (प्रतिशत में)	2011-12 (प्रतिशत में)
कृषि व संबद्ध उत्पादन	44.2	9.7	12.4
अयस्क और खनिज	8.1	3.4	2.8
विनिर्मित वस्तुएँ	45.3	69.0	66.1
पेट्रोलियम उत्पाद	1.1	16.8	16.7

ऊपर दी गई तालिका से स्पष्ट है कि कुल निर्यातों में कृषि व संबद्ध वस्तुओं का हिस्सा 1960-61 में 44.2 प्रतिशत से कम होकर 2011-12 में 12.4 प्रतिशत रह गया है इसके विपरीत इसी अवधि में विनिर्मित वस्तुओं का हिस्सा 45.3 प्रतिशत से बढ़कर 66.1 प्रतिशत हो गया है। जहाँ तक पेट्रोलियम उत्पाद की मात्रा के प्रतिशत का सवाल है 1960-61 के मुकाबले 2011-12 में 1.1 प्रतिशत से बढ़कर 16.7 प्रतिशत हो गया है। यह बात अर्थव्यवस्था की बदलती हुई उत्पादन संरचना दर्शाती है। एक पिछड़ी हुई

व प्राथमिक वस्तुओं पर आधारित अर्थव्यवस्था के स्थान पर भारत में एक प्रगतिशील औद्योगिक क्षेत्र विकसित हो रहा है।

आयात-निर्यात बैंक (Exim Bank)

भारतीय निर्यात आयात बैंक (Export Import Bank of India) : विदेशी व्यापार में व्यवसायियों की सहायता के उद्देश्य से 1 जनवरी 1982 को इस बैंक की स्थापना की गई थी, जिसका मुख्यालय मुम्बई में स्थित है। इसके प्रमुख कार्य है- **(i)** वित्तीय संस्थाओं एवं वाणिज्यिक बैंकों को पुनर्वित **(Refinancing)** की सुविधा प्रदान करना, **(ii)** विदेशों में संयुक्त उपक्रमों की स्थापना के लिए तथा मशीनों एवं अन्य उपकरणों का आयात-निर्यात करने के लिए ऋण प्रदान करना एवं **(iii)** निर्यात बिलों का क्रय एवं कटौती करना, आदि।

विदेशी विनिमय दर

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के सिलसिले में भुगतान के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए देश की मुद्रा का विदेशी मुद्रा के रूप में मूल्य निर्धारित करना पड़ता है तथा इनके पारस्परिक विनिमय दर को निश्चित करना पड़ता है। विभिन्न वस्तुओं के समान ही विदेशी मुद्रा की खरीद-बिक्री के लिए एक विशेष प्रकार का बाजार होता है जिसे विदेशी विनिमय बाजार **(Foreign Exchange Market)** कहते हैं। इस बाजार में विभिन्न संस्थाएँ होती हैं जो चेक, ड्राफ्ट, विनिमय बिल आदि विभिन्न विनिमय साध्य पत्रों **(Negotiable Instruments)** के माध्यम से विदेशी विनिमय की व्यवस्था करती है।

चुंकि अंतर्राष्ट्रीय भुगतान के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ती है जिसके लिए एक देश की मुद्रा को दूसरे देश की मुद्रा में बदलना पड़ता है। लेकिन यहाँ यह प्रश्न उठता है कि एक देश की मुद्रा के बदले दूसरे देश की कितनी मुद्रा दी जाए ? इसके लिए विनिमय दर की आवश्यकता होती है। यानी हम कह सकते हैं कि, "यह दर जिसपर एक देश की मुद्रा को दूसरे देश की मुद्रा में परिवर्तित किया जाता है 'विनिमय दर' कहलाता है।" वास्तव में विनिमय दर दो देशों की मुद्राओं के विनिमय के अनुपात को व्यक्त करती है। जैसे मान लिया जाए कि भारत में एक अमेरिकी डॉलर के बदले लगभग 65 रुपए प्राप्त होते हैं तो डॉलर एवं रुपए की विनिमय दर **$ 1 = ₹ 65** लगभग होगी। विनिमय दर का निर्धारण एक देश की मुद्रा के लिए दूसरे देश की मुद्रा की माँग एवं पूर्ति दर निर्भर करता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की आधुनिक प्रवृत्तियाँ (GATT से WTO तक)

ब्रेटन वुड्स सम्मेलन में तीन संस्थाओं - अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, अंतर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण तथा विकास बैंक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन के स्थापित करने की बात उभर कर सामने आयी पर उनमें से अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष तथा अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण तथा विकास बैंक तो उसी समय संयुक्त राष्ट्र संघ के दो महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्थापित हो गए पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन स्थापित नहीं हो सका। 1947 में 'हवाना' सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन की स्थापना की बात पुनः उभरकर सामने आयी जिसका अमेरिकी सीनेट ने फिर विरोध किया और इस प्रकार हवाना चार्टर पारित नहीं हो पाया पर इसकी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि भारत समेत 23 देशों ने व्यापार प्रतिबन्धों तथा प्रशुल्क (टैरिफ) में कमी लाने के उद्देश्य से एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। बाद में यही समझौता "व्यापार एवं प्रशुल्क पर सामान्य समझौता" (गैट) **(General Agreement on Tariffs and Trade - GATT)** के नाम से जाना गया।

1948 के जेनेवा सम्मेलन के साथ एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन के निर्माण तथा न्यूनतम व्यापारिक संरक्षण या प्रतिबन्ध पर आधारित एक अंतर्राष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था की स्थापना के प्रमुख उद्देश्य से 'गैट' का जन्म हुआ। इसकी स्थापना के साथ जो गैट का प्रथम दौर शुरू हुआ था, वह आठ महत्वपूर्ण दौरों से गुजरता हुआ 15 अप्रैल 1994 को मोरक्को घोषणा के साथ एक नए महत्वपूर्ण मोड़ पर आ गया जबकि एक नयी व्यापार व्यवस्था प्रारंभ हुई तथा विश्व के 104 देशों ने (जिसमें भारत भी एक है) गैट

के समझौते पर आधारित फाइनल ऐक्ट पर हस्ताक्षर किए तथा 1 जनवरी, 1995 को विश्व व्यापर संगठन **(World Trade Organisation-WTO)** की स्थापना हुई। यह नियम आधारित, पारदर्शी एवं प्रत्यक्ष बहुपक्षीय प्रणाली प्रदान करता है।

WTO की स्थापना के साथ संगठन के रूप में **GATT** समाप्त हो गया। पर 'गैट समझौता' जो वस्तुओं में व्यापार से संबंधित था संशोधित रूप से **WTO** के साथ बना हुआ है, पर उसके साथ दो नए समझौते जोड़ दिए गए हैं **(i)** सेवाओं से संबंधित व्यापार के संबंध में सामान्य समझौता **(General Agreement on Trade in Services GATs)** तथा **(ii)** जेनरल एग्रीमेन्ट आन ट्रेड रिलेटेड आसपेक्ट्स ऑफ इन्टेलेक्चुअल प्रापर्टी राइट्स **(TRIPs)**

WTO की स्थापना 'सर्वाधिक वरीयता प्राप्त राष्ट्र' **(Most favoured Nation (MFN)** की अवधारणा पर आधारित है जो यह सुनिश्चित करता है कि कोई सदस्य देश **WTO** सदस्यों के बीच भेद भाव नहीं करेंगे।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. विदेशी व्यापार का संबंध है
(क) दो राज्यों के बीच
(ख) दो जिलों के बीच
(ग) दो देशों के बीच
(घ) दो प्रमंडलों के बीच

2. भारत में 2011-12 में पेट्रोलियम तेल और लुब्रिकेंट के आयात का प्रतिशत हिस्सा था
(क) 44.2 प्रतिशत
(ख) 45 प्रतिशत
(ग) 35.3 प्रतिशत
(घ) 45.8 प्रतिशत

3. भारत में 2010-11 में अनाज और अनाज उत्पादों का आयात किया गया
(क) 45 मिलियन डालर का
(ख) 60 मिलियन डालर का
(ग) 100 मिलियन डालर का
(घ) 119 मिलियन डालर का

4. 2011-12 में भारत में कृषि व संबद्ध उत्पादन का निर्यात प्रतिशत रहा
(क) 9.7 प्रतिशत
(ख) 2.5 प्रतिशत
(ग) 12.4 प्रतिशत
(घ) 19 प्रतिशत

5. 2011-12 में भारत में विनिर्मित वस्तुओं का निर्यात प्रतिशत रहा
(क) 56 प्रतिशत
(ख) 60 प्रतिशत
(ग) 68 प्रतिशत
(घ) 66.1 प्रतिशत

6. भारत में 2011-12 में पेट्रोलियम उत्पादों का निर्यात प्रतिशत रहा
(क) 8 प्रतिशत
(ख) 16.7 प्रतिशत
(ग) 80 प्रतिशत
(घ) 15.8 प्रतिशत

7. **Exim Bank** का मुख्यालय अवस्थित है :
(क) दिल्ली
(ख) पटना
(ग) चेन्नई
(घ) मुम्बई

8. **WTO** की स्थापना हुई
(क) 1 जनवरी 1990 में
(ख) 1 जनवरी 1995 में
(ग) 15 अगस्त 1952 में
(घ) 15 अप्रैल 1994 में

9. इनमें कौन **WTO** का हिस्सा नहीं है -
(क) **GATT 1947**
(ख) **GATT 1995**
(ग) **GATS**
(घ) **TRIPs**

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. घरेलू व्यापार से क्या समझते हैं ?
2. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से क्या समझते हैं ?
3. स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारत के विदेशी व्यापार की प्रकृति क्या थी।
4. वर्तमान समय में भारत के विदेशी व्यापार की प्रकृति क्या है ?
5. Exim Bank की स्थापना कब हुई।
6. GATT का पूरा नाम लिखें।
7. WTO का पूरा नाम लिखें।

3. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. घरेलू एवं विदेशी व्यापार का अर्थ समझाएँ।
2. भारतीय व्यापार की पृष्ठ भूमि बताएँ।
3. भारत के आयात एवं निर्यात की चर्चा करें।
4. आयात-निर्यात बैंक के बारे में लिखें।
5. विदेशी विनिमय दर से क्या समझते हैं ? समझाए।
6. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की आधुनिक प्रवृत्तियों को लिखें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर : 1. क, 2. ग, 3. घ, 4. ग, 5. घ, 6. ख, 7. घ, 8. ख, 9. क

*****